शोध सरोवर पत्रिका

आरती, वषुतक्काटु, तिरुवनंतपुरम-695 014, केरल राज्य।

RNI No. KERHIN/2017/70008 ISSN No.2456-625 X

वर्ष 8 अंक 31 **त्रैमासिक हिन्दी शोध पत्रिका** 10 जुलाई, 2024

पीयर रिव्यू समिति :

डॉ.शांति नायर
डॉ.के श्रीलता
डॉ.बी.अशोक

मुख्य संपादक

डॉ.पी.लता

प्रबंध संपादक

डॉ.एस.तंकमणि अम्मा

सह संपादक

प्रो.सती के
डॉ.एस.लीलाकुमारी अम्मा
श्रीमती वनजा पी

संपादक मंडल

डॉ.बिन्दु सी.आर
डॉ.षीना यू.एस
डॉ.सुमा आई
डॉ.एलिसबत जोर्ज
डॉ.लक्ष्मी एस.एस
डॉ.धन्या एल
डॉ.कमलानाथ एन.एम
डॉ.अश्वती जी.आर

इस अंक में

संपादकीय	:	
कबीर का ब्रह्म तत्व दर्शन	: डॉ. प्रीति के	7
'डॉक्टर' और 'बदला' नाटकों में चित्रित स्त्री सशक्तिकरण	: डॉ.शेर्लिन	9
महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में अभिव्यक्त जीवन-दर्शन	: डॉ.जयश्री ओ.	12
हिन्दी कविता में बाल अधिकार और संकटग्रस्त बचपन	: डॉ.सुजित एन.तंपी	15
बाल संवेदना के परिप्रेक्ष्य में 'दहलीज़ पर'	: बिजी बी	19
माजुली संस्कृति और वैष्णव परंपरा	: डॉ.देवप्रकाश मिश्रा	21
भारतेन्दु हरिश्चंद्र की राष्ट्रचेतना पर आधारित पत्रकारिता	: पूनम कुमारी डॉ. अनिल कुमार निगम	22
कबीर,नानक,दादू और सुन्दरदास के काव्यों में सामाजिक आदर्शः एक अनुशीलन	: डॉ. कृष्णा मीणा	27
आर्थिक लूट और विषमता के विरुद्ध आदिवासी कविताएँ	: वेद प्रकाश सिंह	31
लेड़ीज़ क्लब: भारतीय स्त्री जीवन का आईना	: मिन्नु जोसेफ	36
हिंदी भाषा और सूचना प्रौद्योगिकी	: डॉ. लक्ष्मी एस. एस	40
व्यक्ति के आर्थिक और सामाजिक विकास में प्रत्याहार की भूमिका: एक अध्ययन	: दीपा आर्या	46

यू जी सी से अनुमोदित पत्रिका

लेखकों से निवेदन

भाषा, साहित्य, समाज एवं संस्कृति पर लिखी गयी स्तरीय मौलिक तथा अप्रकाशित रचनाएँ भेजें। प्रकाशनार्थ अनूदित रचनाओं के साथ मूल लेखकों से प्राप्त सहमति पत्र भी भेजें। रचनाएँ हिंदी यूनिकोड मंगल फॉन्ट में टंकित होनी चाहिए। लेख के प्रारंभ में लेख का सार अपेक्षित है जो अधिकतम 150 से 200 शब्दों के मध्य हो। 'सार' में लेख लिखने का उद्देश्य अवश्य परिलक्षित होना चाहिए। लेख के अनुरूप 5 से 7 'की वर्ड' (बीज शब्द) भी लिखें। लेख को यथोचित उपशीर्षकों में विभाजित करके लिखें। लेख के अंत में निष्कर्ष अवश्य दें। शब्द सीमा 2500 से 3000 शब्दों की हो। आलेख के अंत में संदर्भ ग्रंथों की सूची ए.पी.ए. के प्रारूप में हो। लेख भेजते समय अपने नाम, पता, फोन नंबर एवं लेख का शीर्षक ई-मेल में अवश्य लिखें। इस आशय का एक घोषणा-पत्र प्रस्तुत कर दें कि लेख मौलिक है, अप्रकाशित है, भविष्य में इससे संबंधित किसी भी विवाद के लिए लेखक उत्तरदायी होंगे।

रचना के अंत में अपना पूरा डाक पता, मोबाइल नंबर और ई-मेल पता अंकित करें। संक्षिप्त जीवन-परिचय और फोटो भी भेजें।

संपादक

डॉ.पी.लता

शोध सरोवर पत्रिका

मूल्य : एक प्रति रु.100/-
वार्षिक शुल्क रु.400/-

पत्रिका के संबंध में अधिक जानकारी केलिए संपर्क करें - डॉ.पी.लता (संपादक, शोध सरोवर पत्रिका; मंत्री, अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी), आरती, टी.सी. 14/1592, फोरस्ट ऑफीस लेन, ई-28, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम - 695 014, केरल राज्य।

फोन :0471-2332468, 9946679280,9946253648

ई-मेल : akhilbharatheeyhindiacademy@gmail.com

वेबसाइट : www.shodhsarovarpathrika.co.in

संपादकीय

कश्मीर: धरती का स्वर्ग

पाकिस्तान और चीन देश जम्मू और कश्मीर के विभिन्न इलाकों पर अधिकार होने का दावा अब भी करते हैं। भारत विभाजन के पूर्व की जम्मू-कश्मीर रियासत की उत्तरी-पश्चिमी पट्टी पर अब पाकिस्तान का कब्ज़ा है। उत्तरी-पूर्वी पट्टी पर चीन का कब्ज़ा है, जिसे चीन ने सन् 1962 के युद्ध के बाद कब्ज़ा कर लिया था। चीन के अधीनस्थ इलाके को 'अक्साई चीन' कहते हैं। भारत के नियन्त्रण में रहनेवाले क्षेत्रों को ही अब जम्मू और कश्मीर कहे जाते हैं।

अब जम्मू, कश्मीर और लद्दाख भारत की उत्तरी सरहद में स्थित केन्द्र शासित प्रदेश हैं। सन् 1846 के एंगलो – सिक्ख युद्ध में सिक्ख की हार हुई तो अमृतसर की सन्धि के अनुसार जम्मू के राजा गुलाब सिंह कश्मीर के नये शासक बने। उनके वंशजों का कश्मीर में शासन ब्रिटिश अधिराजस्व के तहत सन् 1947 में भारत – विभाजन तक चला। विशाल भारत के विभाजन का बुरा असर भारत के सीमा प्रदेश जम्मू – कश्मीर को झेलना पड़ा। जम्मू – कश्मीर के दो भाग किये गये, जैसे– भारत अधिकृत भाग और पाकिस्तान अधिकृत भाग। भारत अधिकृत जम्मू और कश्मीर दोनों अब केन्द्र शासित प्रदेश हैं। कश्मीर में रहनेवाले अधिकांश मुसलमान हैं। पीर पंजाल और हिमालय की प्रमुख पर्वत श्रेणियों के बीच स्थित क्षेत्र है 'कश्मीर घाटी'।

शीतल आबोहवा, सुन्दर झीलें और नदियाँ, हरे – भरे मैदान, चारों ओर सफेद चादर ओढ़े से बर्फ से ढके पहाड़, हसीन वादियाँ आदि से बनी प्रकृति की अद्‌भुत चित्रकारी कश्मीर में अनुपम सौन्दर्य की छटा बिखेरती है। कश्मीर का यह प्रकृति सौन्दर्य सैलानियों को बराबर लुभाता है। सुन्दर परिदृश्यों से समृद्ध कश्मीर को 'धरती का स्वर्ग' कहने में ज़रा भी अतिरंजना नहीं। प्रकृति सौन्दर्य केलिए प्रसिद्ध कश्मीर में बड़ी संख्या में देश – विदेश के सैलानी प्रतिवर्ष आते हैं। सर्दियों में बर्फबारी, हरी – भरी घाटियाँ, घुमावदार नदियाँ, मनोहर झीलें, शाही उद्यान, घास के मैदान, वसंत ऋतु में खिलते विविध किस्मों के रंगीन सुन्दर फूल, उचित मौसमों में फलते सेब और अखरोट (walnut), ग्रीष्म काल की हरितिमा, शरत् ऋतु में प्रकृति के सुनहरे रंग आदि कश्मीर का प्राकृति – सौन्दर्य बढ़ानेवाली बातें हैं। सर्दी के दिनों में यह प्रदेश प्रकृति की उत्तम सृष्टि नज़र आता है। डल झील, गुलमर्ग, सोनमर्ग और पहलगाम कश्मीर की बेहद सुन्दर जगहें हैं।

सीमाप्रांत होने के कारण बन्दूकधारी सैनिक चौकसी के साथ कश्मीर की प्रधान सड़कों के दोनों पार्श्वों में खड़े रहते हैं। विलक्षण प्रकृति – सौन्दर्य महसूस करने को विविध स्थानों से इस स्वप्न भूमि में आनेवाले पर्यटकों की सुरक्षा का दायित्व ये सैनिक निभाते हैं। हवाई मार्ग से कश्मीर जानेवाले पर्यटक पहले कश्मीर की राजधानी श्रीनगर में उतरते हैं। कश्मीर में सबसे अधिक आबादीवाला श्रीनगर कश्मीरी सांस्कृतिक विविधता का केन्द्र है।

कश्मीर तक का विमान टिकट या रेल टिकट, कश्मीर में ठहरने को होटल, पर्यटन केन्द्रों में जाने को गाड़ी आदि पहले ही आरक्षित करने के बाद ही पर्यटक अपने स्थानों से कश्मीर की ओर रवाना होते हैं। हवाई यात्री श्रीनगर हवाई अड्डे में विमान उतरने का संकेत मिलते ही कश्मीर की प्रकृति के ऊपरी मनोहारी दृश्यों – सफेद कपास भरा सा नीलाकाश, बर्फ ठके पहाड़ आदि - के फोटो लेने में लगे रहते हैं।

हवाई अड्डे या रेलवे स्टेशन से अपनेलिए आरक्षित होटल की ओर की सड़क यात्रा के दौरान दोनों पार्श्वों के मकानों के आँगन से प्राचीरों के भी ऊपर दीखनेवाले लंबे और मज़बूत पौधों में खिले विविध किस्मों – गहरे रंगों के फूल पर्यटकों को चमत्कारी मालूम होते हैं। कश्मीर प्रदेश ही सुन्दर ताज़े फूलों से महकता एक बड़ा उद्यान माना जाता है।

भारत का एकमात्र तथा एशिया का सबसे बड़ा ट्यूलिप उद्यान (Tulip garden) श्रीनगर में है। श्रीनगर में वसंत ऋतु में विविध किस्मों – रंगों के ट्यूलिप फूल खिलते हैं, जो विशेष छटा बिखेरते हैं। दुनिया में कुछ ही क्षेत्र केसर के पौधों की खेती करने में सक्षम हैं। उन क्षेत्रों में से एक है कश्मीर। श्रीनगर से 320 कि.मी की दूरी पर स्थित पुलवामा (Pulwama) जिले का पंपोर नामक स्थान केसर की खेती केलिए अधिक प्रसिद्ध है। पुलवामा 'केसर नगर' नाम से प्रसिद्ध है। कश्मीरी केसर का रंग अपेक्षाकृत गहरा है और इसमें औषधीय गुण है।

डल झील, नागिन झील, वुलर झील, मानसबल आदि कश्मीर की प्रसिद्ध झीलें हैं। इनमें श्रीनगर में स्थित डल झील (Dal lake) दुनिया भर प्रसिद्ध है। यह 18 कि.मी. क्षेत्रफल में फैली हुई है और इसकी तीन दिशाएँ पहाडों से घिरी हुई हैं। इस झील में विभिन्न आकारों की 'शिकारे' (छोटी नावें) दीखती हैं। 'शिकारा' कश्मीरी शब्द है, जिसका अर्थ है 'नाव'। यह देवदार (देवदारु / Pine) लकड़ी से बनायी गयी नाव है। देवदार लकड़ी की विशेषता यह है कि वह पानी में गीले होते रहने पर भी विघटित नहीं होती। अधिकांश शिकारों का ऊपरी भाग सुंदर तिरपाल (Tarpaulin) से ढका हुआ होता है। शिकारा चमकदार रंगों की है, विभिन्न प्रकार से अलंकृत भी। डल झील पर शिकारे में सवारी पर्यटक को एक यादगार अनुभव रहेगा। एक सामान्य शिकारे में लगभग छ: व्यक्ति बैठ सकते हैं और नाविक इसे पीछे की तरफ से खेते हैं। पर्यटकों को ठहरने केलिए डल झील पर सुन्दर – सुसज्जित बहुत सारे हाउस बोट हैं। गाइड से कहे नंबरवाले घाट में अपनी प्रतीक्षा करती शिकारे में चढ़कर पर्यटक डल झील में अपने लिए आरक्षित हाउस बोट में रुकने को पहुँचते हैं। प्राय: हाउस बोटों के कर्मचारी अच्छे मेज़बान हैं। हाउस बोटों के बाहरी – भीतरी भाग देखने में सुन्दर हैं। भोजन भी अच्छे हैं। रात में चारों ओर जलते विद्युत दीपों से प्रदीप्त डल झील पर बहुत सारे शिकारे लुभावने नज़ारे ही हैं। हाउस बोट में रहनेवाले पर्यटक सुबह या शाम को एक घंटे की शिकारा सवारी कर सकते हैं। परिवार के प्रिय जनों या अपने साथियों के साथ ऐसी सवारी मनोरंजक बात है। पर्यटकों को स्थानीय कश्मीरी पोशाक पहनकर शिकारे सवारी का फोटो शूट करने की सुविधा भी है, जो जीवन भर याद रहेगी। डल झील में शिकारा सवारी के दौरान अन्य शिकारों में अपनी शिकारे के पास आनेवाले व्यापारियों से पर्यटक कश्मीरी उत्पाद या चीज़ें खरीद भी सकते हैं, जैसे – केसर, कश्मीरी कहवा (kahwa), परंपरागत कश्मीरी गहने, फूल, खाद्य पदार्थ आदि।

झेलम, चिनाब, रावी आदि नदियाँ हिमालय से जम्मू – कश्मीर में बहनेवाली प्रधान नदियाँ हैं। बहती नदियों का खदबदाता स्वच्छ जल लुभावना है।

कश्मीर में छ: मुगल उद्यान हैं – निशात बाग, शालीमार बाग, चश्माशाही, परी महल, अच्छाबल और वेरीनाग। ये उद्यान विविध किस्मों – रंगों के फूलों से भरे हैं। वसंत ऋतु इन उद्यानों में नयी जान डालती है। कश्मीर घाटी का सबसे बड़ा मुगल उद्यान है 'शालीमार गार्डन' (श्रीनगर)। यह डल झील के उत्तर – पूर्व में है। 'निशात बाग' सीढ़ीदार मुगल उद्यान है। यह कश्मीर घाटी का दूसरा सबसे बड़ा मुगल उद्यान है। यह ज़बरवान पर्वत श्रृंखला की तलहटी में डल झील के पूर्वी किनारे पर स्थित है। इसकी बारह सतहें हैं। यहाँ के पानी का झरना (प्राकृतिक जल प्रपात) बहुत सुन्दर लगता है। शरत् ऋतु में यहाँ के चिनार के लाल पत्तों और धरती की पीली घासों से उद्यान बहुत सुन्दर दिखता है। ऐलण्ड पार्क, मुगल गार्डन, मिनी स्विटज़रलैंड आदि कश्मीर के प्रसिद्ध पर्यटन केन्द्र हैं।

पहलगाम का 'ऐलण्ड पार्क' नदी प्रवाह से

घिरा, हरे – भरे घास (lawn) से आवृत विशाल मैदान है। शीतल हवा, बहती नदी का कल रव, उसका स्वच्छ दूध-सा सफेद पानी हमेशा पर्यटकों की याद में रहेंगे।

पहलगाम में बर्फ ढके पहाड़ों के बीच 'मिनी स्विटज़रलाण्ड' स्थित है, जो धुंध भरी हवा से घिरा हुआ है। यह पहलगाम के ऊपर स्थित पहाड़ी प्रांत है। लुभावने घास का मैदान (Green meadows) और जलपात (Water fall) वाला प्रांत है। यह बैसरन घाटी (Baisaran Valley) में है। यहाँ पहाड के ऊपर जाने का रास्ता तंग, ऊबट – खाबट और कीचड़ भरा है। इस रास्ते में दोनों बगलों में ऊँचे हरे-भरे पेड़ हैं। इस रास्ते से घोड़े पर जाना है। रास्ता ऐसा है कि घोड़े पर यात्रा भी आसान नहीं। इस जगह को 'मिनी स्विरज़र लैंड' कहने का कारण यहाँ की लुभावनी प्राकृतिक छटा है। यह जगह हिमालय की भव्यता के बीच स्थित है, जो हरियाली, क्रिस्टल क्लियर नदियों और स्विटज़रलैंड की याद दिलानेवाली सुरम्य घाटियों से घिरी हुई है।

श्रीनगर में नेहरु पार्क भी दर्शनीय स्थान है।

श्रीनगर में स्थित 'सोनमर्ग' (सोनामर्ग/ Sonamarg) शानदार दृश्योंवाला पहाडी गंतव्य है। यहाँ थजीवास (Thajiwas) ग्लेशियर है। सिन्ध घाटी में स्थित सुनहरा घास मैदान दर्शकों को लुभाता है। यह फल भरा, पहाड़ों से घिरी घाटी है। सोनमर्ग में जो ज़ीरो पोइंट (Zero point) है, वहाँ स्थानीय टैक्सी में जाना पड़ेगा। सोनमर्ग का 'युद्ध स्मारक' शहीद सैनिकों को समर्पित है।

कश्मीर का पहलगाम ('पहलगाम' का अर्थ है 'चरवाहों का गाँव'।) आकर्षणीय पर्यटन स्थल है। यह एक हिल स्टेशन है। यहाँ की हरी – भरी घास के मैदान और स्वच्छ जल पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। यह अनंतनाग जिले से 45 कि.मी (28 मील) दूर लिद्दर (Lidder) नदी तट पर स्थित है। पहलगाम में घूमने लायक कई जगहें हैं।

पहलगाम में घूमने लायक और तीन जगहें हैं A B C घाटियाँ-यानि अरु घाटी (Aru valley), बेताब घाटी (Betaab Valley) और चंदनवारी घाटी (Chandan wari Valley)। ये तीनों पर्वतीय घाटियाँ देखने को यात्रियों को स्थानीय टैक्सी से जाना पड़ेगा। इन घाटियों की ओर जानेवाली सड़क के दोनों ओर हरितिमामय है। 'अरु घाटी' हिमालय की पहाड़ियों के बीच बसी है। लिद्दार नदी की एक शाखा 'अरु नदी' इस स्थान से होकर बहती है। यह स्थान घुड़सवारी और ट्रेकिंग केलिए प्रसिद्ध है। अरु घाटी सर्दी के मौसम में ऊपर से नीचे तक बर्फ से ढकी रहती है। यह पहलगाम से 12 कि.मी.की दूरी पर है। 'बेताब घाटी' पहलगाम से 15 कि.मी. दूर स्थित है। इसका मूल नाम था हज़नघाटी। सन् 1983 में बोलीवुड फिल्म 'बेताब' का शूटिंग यहाँ हुआ था और यह घाटी भी 'बेताब घाटी' नाम से मानी जाने लगी। 'चंदनवारी घाटी' पहलगाम से 16 कि.मी. की दूरी पर है। यह पवित्र 'अमरनाथ तीर्थयात्रा' का प्रवेश द्वार है, जो हिन्दुओं की वार्षिक पवित्र तीर्थयात्रा है। यह घाटी ग्लेशियर (Glacier/ हिमनद) केलिए प्रसिद्ध है। स्लेज (Sledge/ हिमगाड़ी) का आनंद लेने को उचित जगह है।

लोकप्रिय पर्यटन स्थल है 'गुलमर्ग' (Gulmarg)। यह कश्मीर के बारामूला (Baramulla) जिले में है। 'गुलमर्ग' शब्द का अर्थ है 'फूलों का मैादान'। गुलमर्ग कश्मीर का सबसे खूबसूरत हिल स्टेशन है। यह श्रीनगर से 56 कि.मी. की दूरी पर है। यहाँ वसंत ऋतु के समय बहुरंगी फूल खिलते हैं। कश्मीर में पर्यटन को जानेवाले गुलमर्ग में गोंडोला की सवारी करते हैं। यह सबसे ऊँची गोंडोला सवारी है। फेस -1 पर (6000 फीट तक) जानेवालों की अपेक्षा फेस -2 पर (12000 फीट तक) जानेवाले कम हैं। गोंडोला सवारी बर्फ से ढके हिमालय का मनोरम दृश्य पेश करती है, क्योंकि यह अफरवाट(Apharwat) शिखर तक रज्जुमार्ग (Ropeway) से यात्रियों को ले जाती है। हिमालय की पीर पंजाल श्रृखंला में स्थित प्राकृतिक सुन्दरता के

प्रमाण के रूप में उपस्थित और भारी बर्फबारीवाला अफरवाट शिखर गुलमर्ग में समुद्रतल से 4390 मीटर (14,403 फीट) की ऊँचाई पर स्थित है। गुलमर्ग शीतकालीन खेलों और गोंडोला केलिए मशहूर है।

भगवान शिव को समर्पित 'शंकराचार्य मंदिर' श्रीनगर, कश्मीर का सबसे पुराना मंदिर है, लोकप्रिय तीर्थस्थल भी। भक्तों का विश्वास है कि इस मंदिर का निर्माण 200ई. पूर्व में मौर्य राजकुमार जलुका ने करवाया था। अनंतर कई राजाओं ने इसका पुनर्निर्माण करवाया, क्योंकि आक्रमणकारियों ने कई बार इसका विध्वंस किया था। यह श्रीनगर में गोपाद्री पहाड़ी में 1000 फीट से भी अधिक ऊँचाई पर स्थित है। श्रीशंकराचार्य ने 'सौन्दर्य लहरी' नामक आध्यात्मिक ग्रंथ की रचना की थी इस पहाड़ी पर बैठकर। चौकोर आकार के इस मंदिर की वास्तुकला कश्मीरी शिखर शैली का प्रतिनिधित्व करती है। मंदिर तक पहुँचने केलिए लगभग 243 सीढ़ियाँ चढ़नी पड़ती हैं।

कश्मीर का खाना लाजवाब है। वहाँ जानेवाले अपने दिन का आरंभ एक गर्म कप 'कहवा' (कश्मीरी चाय) से करते हैं, मध्याह्न को या सूर्यास्त के समय नून (नमक) चाय का भी मज़ा लेते हैं। 'कहवा' कश्मीर की हरी चाय की पत्तियों, साबुत मसालों, मेवों और केसर का एक अनोखा मिश्रण है। यह चाय स्वास्थ्य केलिए अच्छी है। कश्मीर पोषण मूल्यों से संपन्न मेवों के लिए भी प्रसिद्ध है। पहलगाम के बिजबेहरा में स्थित कई एकड़ों धरती पर सेबों की खेती करनेवाली 'आपिल वाली' दर्शनीय जगह है। सेब के खेतों में पेड़ों की डालियों में लाल, हरे, पीले रंगों के सेब फल लगे हुए दिखाई पड़ते हैं। यह दृश्य पर्यटक ज़िन्दगी भर याद रखेगा। कश्मीर में सेब का मौसम अगस्त से अक्तूबर तक है। सेब फलने के मौसम (अगस्त से अक्तूबर तक) में कश्मीर के सेब के खेतों में जानेवाले पर्यटक ताज़े, रसदार और मीठे सेब खेतों से ही खरीद सकते हैं। कश्मीर के विशेष ठंडक बर्फीले मौसम के कारण से हो, वहाँ के मकानों की छतें अलुमिनियम चद्दर (Aluminium Roofing Sheet) की हैं। घरों में लकड़ियों के डिज़ाइन अलग-अलग हैं।

कश्मीर के लोगों की आजीविका का एक मार्ग है घोड़ा पालन। घोड़ों का पालक दो-तीन घोड़ों पर पर्यटकों को बिठाकर इनके साथ पैदल चलकर बर्फीले पहाड़ पर घुड़सवारी कराने केलिए ले जाने का दृश्य हमें अचंभित करता है। रोज़ी-रोटी केलिए भेड़ों का पालन करनेवाले भी कई हैं। इन्हें भेड़ों से दूध और ऊन मिलते हैं। कई भेड़ों को एक साथ घास के मैदानों में चराने केलिए सड़कों की छोरों से ले जानेवाला दृश्य वहाँ साधारण है। भेड़ों के आगे उनकी रखवाली करते हुए कुत्ता (Sheep dog) भी रहता है। भेड़, कबूतर या खरगेश को सजाकर पर्यटन केन्द्रों में ले जाना भी एक व्यापार है। पर्यटक इन जीवों के साथ खुशी से फोटो लेकर इन जीवों को वहाँ ले आनेवाले व्यक्तियों को पारिश्रमिक देते हैं।

कश्मीर के बिजबेहारा अनंतमर्ग (Bijbehera Ananta marg) में बहुत सारी क्रिकट फैक्टरियाँ हैं। यहाँ क्रिकट का बल्ला पारंपरिक रूप से कश्मीर विलो (willow) पेड़ से बनाया जाता है। भारत में अकेला कश्मीर ही एक राज्य है, जहाँ विलो पेड़ उगाया जाता है। मात्र ठंडे प्रदेशों में विलो पेड़ उगते हैं। परंपरागत कश्मीरी शॉलों और गलीचों की दस्तकारी का नमूना है 'अलीशा फैक्टरी'।

कश्मीर घाटी की अर्थ व्यवस्था 'पर्यटन' पर बहुत अधिक निर्भर है। यह घाटी शानदार प्राकृतिक दृश्यों तथा शानदार सांस्कृतिक विरासत के कारण पर्यटकों को आकर्षित करती है। कश्मीरवासियों के मत में कश्मीर में हर मौसम, चाहे गर्मी हो या सर्दी आकर्षक रहता है। कश्मीर साल भर घूमने केलिए बेहतरीन जगह है। कश्मीर पर कई बार पाकिस्तान और चीन के हमले हुए हैं। आइंदा भारत का उत्तरी सीमांत राज्य कश्मीर, जो अपनेलिए सर्वथा उचित 'धरती का स्वर्ग' विशेषण से विभूषित है, सदा शांत रहे, सुन्दर रहे-यही हर पर्यटक की आशा और प्रार्थना होगी।

डॉ.पी.लता
संपादक, शोध सरोवर पत्रिका
(मंत्री, अखिल भारतीय हिन्दी अकादमी)।

कबीर का ब्रह्म तत्व दर्शन

◆ डॉ. प्रीति के

कबीर मूलतः निर्गुणवादी थे। अतः उनका ब्रह्म निराकार, निर्गुण, निर्विकल्प, अनादि, अजन्मा, नित्य एवं सत्य है। परमार्थ के लिए, ईश्वर के लिए, परम चैतन्य के लिए, कबीर ने 'राम' शब्द का प्रयोग किया। कबीर का निर्गुण ब्रह्म विश्व का चैतन्य मात्र अधिष्ठान है। कबीर का राम तो विश्व से अतीत है और विश्व में व्याप्त भी है। वह विश्वोत्तीर्ण है और विश्वमय भी है। वह घट-घट में समाया हुआ है। वह अवर्ण है किंतु सभी वर्ण उसी के हैं। वह अरूप है, किंतु सभी रूप उसी के हैं। वह देश-काल से परे है। उसका न आदि है, न अंत। वह कुछ अंश में वेदांत के निर्गुण ब्रह्म से मिलता है। कबीर का निर्गुण ब्रह्म विश्व से परे भी है और विश्व में व्याप्त भी। कहीं-कहीं कबीरदास विचारों की तन्मयता में आकर भावनाओं में बह निकलते हैं और उन स्थानों पर आपने ब्रह्म के सगुण और निर्गुण रूपों को एक ही स्थान पर प्रदर्शित कर दिया है –"सन्तो धोखा, कासूँ कहिये /गुन में निरगुन, निरगुन में गुन बाटिछाँडि क्यूँ रहिये/अजर अमर कथै सब कोई, अलख न कथणां जाई। /नाति स्वरूप वरण नाहिं, जाके घटि घटि रह्यौ समाई /प्यंड ब्रह्मांड छाडिजे कहिए कहै कबीर हरि सोई।"[1] कबीर परमतत्व को निर्गुण राम कहते हैं। इस परमज्योति की गति अलक्षित तथा अज्ञेय है। इसका मर्म वेद व पुराण में प्रकट हो पाता है –"निरगुन राम निरगुण राम जपहु रे भाई /अविगति की गति लखी न जाई। /चारि वेद जाकेसुमृत पुराना /नौ व्याकरणां मरम न जाना।"[2]

कबीर ने राम नाम का उल्लेख निर्गुणातीत, द्वैताद्वैत, विलक्षण, भावाभावविनिर्मुक्त, अलख, अगोचर, अगम्य, प्रेम पारावर, निर्गुण ब्रह्म के रूप में ही किया है; दशरथ पुत्र के रूप में नहीं -दशरथ सुत तिहुँ लोक बखाना, राम नाम का मर्म है आना। डॉ. हज़ारीप्रसाद द्विवेदी कबीरदास के ब्रह्म विचार के विषय में लिखते हैं "वह किसी भी दार्शनिक दण्ड से परे हैं, तार्किक बहस के ऊपर है, पुस्तकीय विद्या से अगम्य है, प्रेम से प्राप्त है, अनुभूति का विषय है, सहज भाव से भक्ति है।"[3] हिंदू और मुसलमानों में धार्मिक ऐक्य की प्रतिष्ठा के लिए उन्होंने निराकार ईश्वर की उपासना का मार्ग प्रशस्त किया।

कबीर का राम घट-घट में व्याप्त है; अचर, अगर और सर्वशक्तिमान है। उसे ढूँढने के लिए इधर-उधर भटकना व्यर्थ है। ज्ञान द्वारा हृदय के अंदर ही उसका साक्षात्कार होता है। वह न जन्म लेता है, न विनष्ट होता है –"जाये मरै न सुकुटि आवै नाम निरंजन जाकौ/अविनासि उपजै नहिंबिनसें संत सुजान कहै ताकौ।"[4]

कबीर का ब्रह्म अनुभूति का विषय है। कबीर जहाँ ईश्वर को अगम, अगोचर, अविगत जैसे शब्दों द्वारा निर्दिष्ट करते हैं वहाँ उनका दृष्टिकोण एक दार्शनिक का रहता है। किंतु जहाँ कहीं उन्होंने ईश्वर के साथ माँ-बाप, पीव आदि के रूप में संबंध विशेष व्यक्त किये हैं, वहाँ वे धार्मिक स्तर से बोलते हुए हमारे सामने आते हैं। कबीर का निर्गुण ब्रह्म सर्वथा निराला है। वह तर्क का विषय न होकर केवल अनुभवगम्य ही है। उनके ब्रह्म संबंधित विचारों की पृष्ठभूमि उनकी आत्मानुभूति और उनका आत्मचिंतन है जो अत्यंत सबल और पुष्ट है –"लाली मेरे लाल की जित देखूँ तित लाल लाली देखन मैं गयी, मैं भी हो गई लाल।।"[5]

जिस प्रकार घड़े के भीतर और बाहर पानी होता है उसी प्रकार इस शरीर के भीतर और बाहर वही परमात्मा है। सच तो यह है कि इस शरीर की स्थिति भी परमात्मा की सत्ता से है। इस प्रकार कबीर ने ब्रह्म के संबंध में अद्वैतवादी विचारधारा को व्यक्त करते हुए कहा है-

"जल में कुंभ, कुंभ में जल, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुंभ जल जलहि समाना, इहि तथ कथ्यौ ग्यानि।।"[6]

यह कुंभ ही तो माया है, जो जीव को ब्रह्म से अलग रखती है, माया का घर फूटने पर सब एक है। राम एक विशिष्ट शरीर में ही नहीं, विश्व भर में व्याप्त है। वह ससीम नहीं, असीम है। उन्होंने ईश्वर के निर्गुण रूप को तो प्रधानता दी है, किंतु सगुण रूप की सर्वथा उपेक्षा भी

नहीं की। गुण में ही निर्गुण है और निर्गुण में गुण है। अर्थात् सत्व, रज, तम आदि में उस गुणातीत की सत्ता व्याप्त है। सब गुण उस गुणातीत में ही अधिष्ठित हैं। अतः सब गुण उसी में हैं। भगवान के निर्गुण रूप के होने का अभिप्राय उसका अभाव रूप होना नहीं है। निर्गुण का तात्पर्य है तीनों गुणों से अतीत होना –

"संतौ धोखा कासूं कहिए गुण में निर्गुण निर्गुण में गुण है, बाट छांडि क्यूं बहिए।"[7]

कबीर उस परमतत्व को सत्व, रजस, तमस तीनों गुणों से परे मानते हैं-

"रजस तामस सातिगतीन्यूं, ये सब तेरी माया। /चौथे पन को जो जन चीन्है तिनहि परम पद पाया।"[8]

कबीरदास का नाथयोग परंपरा से सीधा संबंध था। परमतत्व को निर्गुण-सगुण या द्वैत-अद्वैत से परे रामतत्व के रूप में लक्षित करने की बात, योगियों के दर्शन में मान्य है। परमतत्व को द्वैत-अद्वैत से परे निर्दिष्ट करने का अर्थ था सारे विवादों से ऊपर उठ जाना। यही कबीर का अभीष्ट था।" वे यह भी मानते हैं कि आकार रहित और अव्यक्त होते हुए भी अर्थात् हाथ, मुख, नेत्र, जिह्वा आदि के न होने पर भी वह परमात्मा संसार की सारी संवेदनाएँ ग्रहण करने में समर्थ है। वह बिना मुख के खाता है, बिना पैरों के चलता है, बिना जिह्वा के गुणगान करता है और अपने स्थान पर स्थिर रहते हुए भी दसों दिशाओं में गतिशील रहता है –

कबीर के ऊपर उपनिषदों का भी प्रभाव पड़ा है। 'बृहदारण्यक उपनिषद' के 'अहं ब्रह्मास्मि' सिद्धांत का प्रभाव कबीर की उक्तियों में दृष्टिगोचर होता है– हरि मरि हैं तो हम हूँ मरि हैं हरि न मरें हम काहे कू, मरि हैं। निर्गुण निराकार परब्रह्म को ही उपनिषदों में नेति नेति कहा गया है।कबीर के ब्रह्म तो भेद-भाव, पाप-पुण्य, ज्ञान-ध्यान, स्थूल-शून्य से परे हैं। वे यह भी कहते हैं कि वह ब्रह्म तीनों लोकों से परे ऐसा अनूप तत्व है जिसे जैसा कहा जाता है वैसा नहीं है, लेकिन कहने-सुनने से सुख प्राप्त होता है और परमार्थ की सिद्धि होती है –

"अलख निरंजन लखै न कोई, निरभै निराकार है सोई /सूनिअसथूल रूप नहीं रेखा, द्रिष्टि अद्रिष्टि छिप्यों नहीं पेखा। बरन अबरन कथ्यौ नहीं जाई, सकल अतीत घट रह्यौ समाई आदि अंत ताहि नहीं मधे, कथ्य है न जाई आहि अकथे।[9]

परब्रह्म के तेज़ का अनुमान नहीं किया जा सकता, वाणी के द्वारा उसे व्यक्त नहीं किया जा सकता। केवल अनुभव करना ही उसका प्रमाण है। उसका असीमित प्रकाश ऐसा प्रतीत होता है, मानो सूर्यों की श्रेणियाँ उदित हो गयी हैं- 'कबीर तेज अनंत का मानौंऊगी सूरज सेणि।'

'छन्दोग्योपनिषद' की 'सर्व खल्विदं ब्रह्म' की अवस्था के अनुसार आत्मा सब बंधनों से मुक्त होकर ब्रह्मत्व का अनुभव करती है। तब 'तू' की प्रतीति समाप्त हो जाती है और सर्वत्र ब्रह्म की सत्ता ही दृष्टिगोचर होती है। कबीर ने इस दशा का वर्णन किया है –खालिक खलक खलक में खालिक सब घट रह्यो समाई।

कबीर ने परब्रह्म को प्रेम तथा भक्ति से जोड़कर दार्शनिक नीरसता को समाप्त किया है। कबीर की ब्रह्म-प्रेम विषयक जितनी भी रचनाएँ मिलती हैं उनमें इस तत्व को खोजा जा सकता है। कबीर के आत्मा-परमात्मा के संबंध में जो विभेदकारी तथा द्वित्व की भावना मौजूद थी, जिसके कारण सारा समाज ईश्वरमय तथा विभिन्न प्रकार के पाखंडपूर्ण कर्मकाण्डों के द्वारा मुक्ति की खोज कर रहा था, उससे बहुत हद तक छुटकारा प्रदान किया। कबीर ने बाह्याडंबरों का खंड न कर, द्वित्व की भावना को समाप्त कर, जीव-ब्रह्म और आत्मा-परमात्मा की एकता प्रतिपादित की।

कबीर अपने दार्शनिक विचारों के माध्यम से मनुष्य-मनुष्य की एकता सिद्ध करना चाहते हैं। वे जानते हैं कि सामाजिक प्रगति तब तक नहीं हो सकती जब तक समाज में एकता न हो। इसी मानवीय एकता के लिए कबीर जीव-ब्रह्म के ऐक्य का मत रखते हैं और भेदवादी तथा अलगाववादी तत्वों का विरोध करते हैं। कबीर का विचार है कि पवन एक है, जल भी एक है और संपूर्ण संसार एक ही ब्रह्म की ज्योति से प्रकाशित हो रहा है। सारे जीव एक ही मिट्टी या एक ही हाड़-माँस के बने हैं और इन सब को बनानेवाला भी एक है, फिर द्वित्व की भावना कैसी ? इस पर एक उदाहरण द्रष्टव्य है –"हँमतौ एक एककरि जाँना।/दोई कहै तिनहीं को दोजग, जिन नाँहिन पहिचाना /एकै पवन एक ही पाँनी, एक जोति संसारा/एक ही खाक घडे सब भाँडे, एक ही सिरजन हारा। [10]

कबीर जानते हैं कि जब तक समाज में एक जैसी व्यवस्था नहीं होगी तब तक एकता संभव नहीं। इस एकता के लिए सब से बड़ी बाधा वे अज्ञानी जीव हैं जो राम नाम के तत्ववाद को नहीं समझते। भगवान जिस रूप में है उसे ठीक उसी रूप में व्यक्त करना संभव नहीं। कबीर का अंतिम निष्कर्ष है-हरि जैसा तैसा रहे तू हरखि हरखि गुन गाई। उसका अनुभव तो गूँगे के गुड़ की तरह है। कबीर ने शरीर-सरोवर के भीतर भगवान को ज्योति रूप में देखने का प्रयास किया है –

"सरीर सरोवर भीतर आछै कमल अनूप /परम ज्योति पुरुषोत्तम जाके रेख न रूप।" [11]

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि परमतत्व के संबंध में कबीर की मान्यताएँ उनके निजी चिंतन का परिणाम है और उसके युग में व्याप्त आध्यात्मिक चेतना से प्रेरित भी। हमने देखा है कि कबीर के राम अखिल विश्वव्यापी, सर्वनिरपेक्ष परमतत्व हैं। वे इच्छा मात्र से सृष्टि रचना में समर्थ हैं। वे अव्यक्त, अगोचर होते हुए भी करुणा, दया, कृपा, उदारता आदि गुणों से युक्त हैं, हमारे हृदय में भी विद्यमान हैं। कबीर की निर्गुण ब्रह्म विषयक साधना मुख्यतया अद्वैतवादी दृष्टिकोण से संबंधित है। उन्होंने अद्वैत तत्व को विभिन्न नामों से अभिहित किया है-परब्रह्म, परमात्मा, हरि, निरंजन, अलख, खालिक, निर्गुण राम आदि। अतः वे ब्रह्म के उस रूप में विश्वास रखते हैं जो निर्गुण, निराकार, सर्वव्यापी और अविनाशी हैं।

संदर्भ:

1.रामकिशोर शर्मा, कबीर ग्रंथावली, लोकभारती प्रकाशन,इलाहाबाद,प्रसं – 1990,पृ.418

2. वही, पृ.340

3. आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, कबीर,राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, ती.सं.1985, पृ.61

4. डॉ. श्यामसुंदर दास कबीर ग्रंथावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी,आठवाँ सं- 2004,पृ.10

5. तेज नारायण टंडन कबीर वाणी, विद्या मंदिर, प्र. सं .1952,पृ.5

6. डॉ. श्यामसुंदर दास कबीर ग्रंथावली,आठवाँ सं- 2004, पृ.80

7. डॉ. भगवत स्वरूप, कबीर ग्रंथावली, विनोद पुस्तक मंदिर,प्र.सं. -1969,पृ.339

8 .रामकिशोर शर्मा, कबीर ग्रंथावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र.सं –1990 पृ.421

9.वही, पृ.605

10.डॉ. श्यामसुंदर दास कबीर ग्रंथावली,आठवाँ सं- 2004, पृ.82

11.रामकिशोर शर्मा–कबीर ग्रंथावली, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र सं – 1990, पृ.28

◆एसोसिएट प्रोफेसर तथा अध्यक्षा,
हिन्दी विभाग, कण्णूर विश्वविद्यालय, केरल राज्य।
मो.-8289918100
ई-मेल – preethamandeep@gmail.com

'डॉक्टर' और 'बदला' नाटकों में चित्रित स्त्री सशक्तिकरण

◆ **डॉ.शेर्लिन**

पुरुष प्रधान भारतीय समाज में परंपरा से पुरुष स्वयं को श्रेष्ठ और स्त्रियों को हेय समझकर उन पर अन्याय करता आया है । आधुनिक काल में भी पुरुषों की इस प्रवृत्ति में विशेष परिवर्तन नहीं हुआ । लेकिन आधुनिक काल की शिक्षित नारी प्राचीन काल की स्त्रियों की तरह पुरुषों के द्वारा हो रहे अपमान को चुपचाप नहीं सहती, बल्कि हिम्मत और सहारा लेकर अपना लक्ष्य साध लेती है। प्राचीन काल में स्त्री ,पुरुष के द्वारा होनेवाले अपमान एवं अन्याय को सहन करके अपमानित एवं उपेक्षित जीवन जीती थी। परंतु आधुनिक काल की स्त्री में ऐसे अन्याय और अपमान के विरोध में प्रतिक्रिया पैदा हुई है । पुरुष द्वारा

तिरस्कृत नारी प्रतिहिंसा की भावना में परिचालित होकर भयंकर रूप भी धारण कर लेती है । साथ ही नारी सुलभ दया और विवेक के उद्रेक तथा आत्मनियंत्रण द्वारा वह नारी के प्रकृत स्वभाव का परिचय भी देती है । स्त्री का सर्वमान्य नारी-मन पति द्वारा किए गए अपमान का प्रतिशोध लेना चाहता है, परंतु उसके अंदर का दूसरा मन अपने स्वतंत्र विकसित व्यक्तित्व के आगे सिर झुकाकर अपना प्रतिशोध पूरा करता है। वस्तुतः नारी के प्रतिशोध की भावना और कर्तव्य का द्वंद्व ही 'डॉक्टर' और 'बदला' नाटकों में चित्रित हुआ है ।

'डॉक्टर' नाटक विष्णु प्रभाकर का एक मनोवैज्ञानिक नाटक है। इस नाटक की नायिका डॉ अनिला का मानसिक अंतर्द्वंद्व ही इस नाटक की कथावस्तु का केंद्रीय आधार है। अनिला (मधुलक्ष्मी) कम पढ़ी-लिखी होने के कारण उसका पति इंजीनियर सतीश शर्मा उसे छोड़ देता है। मधुलक्ष्मी अपनी बेटी सहित अपने भाई कर्नल माधव के संरक्षण में जीती है। वहीं रहकर वह अपनी पढ़ाई ज़ारी रखती है और डॉक्टर बन जाती है। डॉ.अनिला अपनी बलबूते पर अन्य डॉक्टरों की सहायता से एक अच्छा नर्सिंग होम चलाती है। उसकी ख्याति दूर-दूर तक फैल जाती है । इस नर्सिंग होम की ख्याति सुनकर उसका पूर्व पति सतीश शर्मा अपनी दूसरी पत्नी को लेकर चिकित्सा के लिए वहाँ आता है। अनिला पहले अपने पति द्वारा किए गए अपमान का प्रतिशोध लेना चाहती थी। डॉ.अनिला का मधुलक्ष्मी रूपी मन सौत को मारकर पति को दुखी बनाना चाहता है, परंतु उसके अंदर का डॉक्टर उसे ऐसा करने से रोकता है और डॉक्टरी पेशे के कर्तव्य के अनुसार सौत को बचाती है । वह सतीश शर्मा से कहती है - "आपकी पत्नी का ऑपरेशन सफल हुआ। वह जल्दी तगड़ी हो जाएगी। बधाई हो।"[1] डॉ अनिला मानसिक द्वन्द्व में उलझती ज़रूर है, लेकिन अंत में अपने डॉक्टरी पेशे के कर्तव्य का निर्वाह करती है ।

'डॉक्टर' नाटक का प्रधान कथापात्र डॉ.अनिला है, जिसका असली नाम मधुलक्ष्मी है। अशिक्षित होने के कारण उसका पति सतीश शर्मा उसका तिरस्कार कर उसे छोड़ देता है। कर्नल माधव सतीश शर्मा से कहता है - "यही थी डॉ.अनिला तुम्हारी पहली पत्नी मधुलक्ष्मी शर्मा, जिन्हें तुमने पंद्रह वर्ष पहले इसलिए छोड़ दिया था कि तुम्हारे अफसर बन जाने के बाद वह तुम्हारे योग्य नहीं रही थी। कम पढ़ी-लिखी थी। सोसायटी में घूम-फिर नहीं सकती थी, उठ-बैठ नहीं सकती थी, खा -पी नहीं सकती थी....।"[2] पति के द्वारा अपमानित मधुलक्ष्मी प्रतिशोध लेती है। पढ़-लिखकर वह डॉक्टर अनिला बनती है। उसका एक विख्यात नर्सिंग होम है जहाँ एक दिन उसका पति अपनी दूसरी पत्नी को मारणासन्न की अवस्था में ले आता है। डॉ.अनिला की गैर हाज़िरी में सतीश शर्मा की पत्नी को अस्पताल में भर्ती करवाते हैं ।जब डॉ अनिला को इसकी जानकारी मिलती है तब वह गुस्से से पागल हो जाती है। इस मरीज़ को अस्पताल से निकालने को बोलती है। वह कहती है- "हाँ मैं ठीक कहती हूँ इस मरीज़ के लिए इस नर्सिंग होम में स्थान नहीं है।"[3] डॉ.अनिला का मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है । वह क्या करे, क्या न करे इस सोच में वह डूब जाती है। अनिला अपने अंतर्मन से कहती है- "आखिर ऑपरेशन करना ही होगा,पर मैं वह ऑपरेशन नहीं करूँगी। नहीं करूँगी... लेकिन सब इंतज़ाम हो चुका है। सबको मालूम है कि आज ऑपरेशन होना है। क्या कहेंगे ? कुछ भी कहें मैं ऑपरेशन नहीं करूँगी लेकिन... ओह ,मैं क्या .... मैं क्या करूँ..... ।"[4] साधारण औरत के समान उसके मन में भी बदले की आग भभक उठती है । डॉ.अनिला दुविधा में पड़ जाती है। एक तरफ प्रतिशोध की भावना, तो दूसरी तरफ कर्तव्यपरायणता। डॉ.अनिला केशव से कहती है - "ओह केशव ! मुझे जाने दो ! मुझे यहाँ से भाग जाने दो । मैं उसे मार डालूँगी ।उसकी हत्या कर दूँगी । सच कहती हूँ मेरे अंदर कोई घुसा बैठा है जो मुझसे उसकी हत्या करवा देगा ।[5] मानसिक अंतर्द्वंद्व में उलझी डॉ अनिला सौत के ऑपरेशन की ज़िम्मेदारी डॉ केशव और डॉ.शाहिद

को सौंपकर वहाँ से अपनी बेटी के पास नैनीताल जाने का विचार करती है। वह गाड़ी पकड़कर हवाई अड्डे तक जाती है। लेकिन डॉ.अनिला के अंदर का डॉक्टर उसके इस तरह भाग जाने का विरोध करता है। वह उसे जाने नहीं देता और डॉ अनिला हवाई अड्डे से वापस आती है और अपनी सौत का ऑपरेशन स्वयं करने का निर्णय लेती है। ऑपरेशन के दौरान भी उसका मन विचलित होता है। उसका अंतर्मन बदले की भावना को जागृत करता है। वह आवाज़ कहता है - "मैं मधुलक्ष्मी हूँ, मुझे भूलो मत। मैं ही तुम्हारे जन्म का, तुम्हारी प्रगति का, तुम्हारी शोहरत का कारण हूँ। मैं नारी का बदला चाहती हूँ। मैं पुरुष को तड़पते देखना चाहती हूँ। बह जाने दो रक्त ..... निकल जाने दो प्राण..... नस-नाड़ियों को बंद मत करो .....अब अभी अवसर है , छोड़ दे, फोरसेप्स अंदर छोड़ दे, सी मत, सी...।"[6] डॉ.अनिला में सुप्त पड़ी मधुलक्ष्मी जागृत होती है। वह पति से प्रतिशोध लेने की भावना उत्पन्न करती है। सौत को मारकर पति को दुखी बनाने का विचार होता है, डॉ.अनिला के दूसरे मन में डॉक्टरी पेशो के कर्तव्य की भावना को महत्व देकर मरीज़ को बचाने का विचार आता है । प्रतिशोध की भावना और कर्तव्य की भावना के संघर्ष में अंत में कर्तव्य की भावना को ही महत्व देकर सौत को बचाना और पति को अपने व्यक्तित्व के आगे शर्म से सिर झुका देना आदि डॉ.अनिला के उज्ज्वल चरित्र को प्रतिपादित करते हैं ।

'बदला' डॉ एन चंद्रशेखर नायर का एक सामाजिक नाटक है। इस नाटक की नायिका नीरा देवी है। नीरा देवी का पति देवकीनाथ गर्भवती नीरादेवी को चलती रेलगाड़ी से धकेल देता है। देवकी नाथ सोचता है कि नीरादेवी मर गई। लेकिन नरेंद्रनाथ नामक एक सज्जन व्यक्ति के संरक्षण में उसे एक नया जीवन मिलता है और वह अध्यापिका बन जाती है। अपने पुत्र का पालन-पोषण करने में वह सक्षम हो जाती है। धन के लालच में देवकीनाथ दूसरी शादी करता है, लेकिन जल्द ही उसकी पत्नी उसे छोड़ देती है। कई सालों बाद धनाभाव की स्थिति में मानसिक रूप से त्रस्त देवकीनाथ दर-दर भटकते हुए मूर्छित अवस्था में नीरा देवी को सड़क पर पड़ा मिलता है। नीरादेवी उसे आश्रय देती है और वेश बदलकर नर्स के रूप में उसकी सेवा-सुश्रूषा करती है। आम औरतों के समान उसके मन में भी बदले की आग भभक उठती है। वह नरेंद्र से कहती है - "मैं स्त्री हूँ। मैं कई बार...उनको मारने को तैयार हुई। लेकिन उनके पास जाने पर मैं बिल्कुल काँप जाती थी। उनका मुख देखकर मेरी आँखें भर आती थीं।"[7] नरेंद्रनाथ नीरादेवी को उपदेश देता है कि वह देवकीनाथ को स्वीकार करे। लेकिन वह उनकी प्रार्थना को ठुकरा देती है। वह कहती है - "दादाजी, मैं उनका आदर करती हूँ, लेकिन मैं अब उनकी स्त्री कैसे बनूँगी। मैंने उनकी सेवा की है। यह मेरे बड़े भाग्य की बात हुई। दादा, अन्यायी की सेवा करना कोई छोटा काम तो नहीं है"।[8] इस नाटक के ज़रिए लेखक ने स्त्री को एक देवी का रूप दिया है, जो बहुत कुछ सहकर भी अपने पूर्व पति की सेवा करती है, लेकिन उसे वापस अपनी ज़िन्दगी में अपने पति के रूप में स्वीकार नहीं करती। देवकीनाथ जब नीरा देवी को पहचान जाता है तब वह घुटने टेकता है। लेकिन नीरा देवी देवकी नाथ के सामने अपने बेटे से यह कहने में भी हिचकती नहीं कि-"बेटा तेरे पिता मर चुके हैं"[9]। इस एकांकी नाटक में नारी के प्रति पुरुष के क्रूर व्यवहार पर नारी के त्याग और सेवा भाव की विजय दिखती है। नीरा देवी सहिष्णुता, त्याग और करुणा की देवी है। वह अपने व्यक्तित्व को छुपाकर पति की सेवा करती है, लेकिन उसे स्वीकारती नहीं।यही उसका बदला है। प्रस्तुत नाटक में लेखक ने नीरा देवी के ज़रिए एक सुदृढ़ सशक्त नारी का चित्रण किया है ।

इस एकांकी में लेखक ने नीरा देवी का चरित्र आदर्शवादी सीमाओं में आबद्ध किया है, साथ ही साथ एक सशक्त नारी के रूप में भी चित्रित किया है। उसमें मानवता है, पर मानवीय दुर्बलता नहीं। वह अत्याचार के सम्मुख नत नहीं होती। परंपरागत रूढ़िवादी मान्यताओं को स्वीकार नहीं, करती। पुरुष पिट्ठू समाज में पाई जानेवाली नारी की दयनीय स्थिति उसमें

साकार हो उठी है। लेकिन उसने इस स्थिति का डटकर सामना किया और स्वतंत्र अस्तित्व बनाने में वह कायम हुई। नीरा देवी का प्रेम मर चुका था। उसके पति देवकीनाथ ने उसके साथ घृणित व पैशाचिक कर्म किया था।जब वह गर्भवती थी तब उसने चलती रेलगाड़ी से मुँह में कपड़ा ठूँसकर उसे बाहर धकेल दिया था। ऐसे क्रूर व्यक्ति की वह सेवा ज़रूर करती हैं, पर उसे पुनः स्वीकारना नहीं चाहती, भले ही वह व्यक्ति आत्मग्लानि से भर उठता है, लज्जित होता है, क्षमा-याचना करता है। लेखक ने नीरादेवी को सचमुच एक देवी का रूप दिया है जो इतना सब कुछ सहकर भी अपने पति की सेवा करती है। बदले की भावना उसमें ज़रूर उठती है । लेकिन वह बदला नहीं लेती, उसकी रक्षा ही करती है ।यह जानकर नरेंद्र कहता है - "हाँ, यह स्त्री होने का अनुग्रह है । स्त्री इसलिए स्त्री है।"[10] लेखक ने इस पुरुष प्रधान समाज में स्त्री की इज़्ज़त रख ली है। उसके स्वाभिमान की लाज रखी है। प्रस्तुत नाटक में लेखक ने नीरा देवी के ज़रिए एक आधुनिक नारी का चित्रण किया है, जो जुल्मों का विरोध करती है और समाज में अपने अस्तित्व जमाए रखने का यथासंभव प्रयत्न करती है ।

विष्णु प्रभाकर का नाटक 'डॉक्टर' और डॉ एन चंद्रशेखरन नायर का नाटक 'बदला' दोनों नायिका प्रधान नाटक हैं। डॉ.अनिला और नीरादेवी दोनों पति द्वारा पीड़ित हुई थीं। पुरुष प्रधान समाज में पुरुष (पति) के द्वारा किए गए अन्याय और अपमान के कड़वे घूँट पीकर डॉक्टर अनिला और नीरा देवी उसकी प्रतिक्रिया में अपने जीवन से हार न मानकर स्वतंत्र रूप से विकसित किए गए अपने व्यक्तित्व के आगे उसी अहंवादी अपने- अपने पुरुषों (पतियों) को शर्म से सिर झुकानेवाली सशक्त आधुनिक नारियों के रूप में प्रस्तुत हुई हैं । ये दोनों स्त्रियाँ प्रतिशोध की आग में जलती जरूर हैं, लेकिन स्त्री सहज दया करुणा के कारण अपने पति को बख्श देती हैं। विष्णु प्रभाकर जी और डॉ एन चंद्रशेखरन नायरजी ने अपने-अपने नाटकों में डॉ अनिला और नीरादेवी के उज्ज्वल रूप प्रस्तुत किये हैं जो पुरुष प्रधान समाज का डटकर सामना करते हुए अपना स्वतंत्र अस्तित्व कायम करने में सफल हुई हैं।

संदर्भ

1 डॉक्टर -विष्णु प्रभाकर ,प्रवीण प्रकाशन,सातवां संस्कण -1980,पृष्ठ 91

2.वही, पृष्ठ 91 3.वही, पृष्ठ 31

4.वही, पृष्ठ 59 5.वही, पृष्ठ 72

6.वही, पृष्ठ 89

7.डॉ. एन.चंद्रशेखर नायर का नाटक साहित्य -डॉ एन चंद्रशेखर नायर -श्री निकेतन प्रकाशन -प्रथम संस्करण 1982,पृष्ठ 50

8. वही, पृष्ठ 51 9. वही, पृष्ठ 53

10. वही,पृष्ठ 50

◆असोसिएट प्रोफेसर तथा अध्यक्षा

हिन्दी विभाग

सरकारी संस्कृत कॉलेज, तिरुवनंतपुरम,

केरल राज्य।

महादेवी वर्मा के गद्य साहित्य में अभिव्यक्त जीवन-दर्शन

◆ **डॉ.जयश्री ओ.**

सारांशः

साहित्य समाज का दर्पण होने के साथ एक मार्गदर्शक भी है।समाज के जीवन और उसके हितों का ज्ञान हमें साहित्य द्वारा मिलता है।साहित्य समाज को स्वस्थ कलात्मक ज्ञानवर्धक मनोरंजन प्रदान करता है, जिससे सामाजिक संस्कारों का परिष्कार होता है।अतः साहित्य को जीवन की मज़बूत दीवार मानते हैं। सच्चा साहित्य मानव जीवन की तरक्की व चारित्रिक विकास में सदैव सहायक होता है। आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकी एवं भूमण्डलीकृत युग में मानवीय मूल्यों के जाने-अनजाने जो विघटन एवं विस्फोट होता जा रहा है उसका सम्यक चित्र प्रस्तुत करके उसके प्रति समाज में जागरूकता पैदा करने में महादेवीजी की रचनाएँ जो भूमिका निभा रही हैं वह

अनुपम है। आपके लेखन में सांस्कृतिक और सामाजिक उन्मेष के साथ सामाजिक समरसता का जो स्वर मुखरित है वही उनका जीवन-दर्शन है।

बीज शब्दः जीवन दर्शन-निवृत्तिमूलक-प्रवृत्तिमूलक-मानवतावाद-जिजीविषा- आस्था।

विषय चयन

जीवन-दर्शन से तात्पर्य है जीवन के प्रति दृष्टिकोण। जब कोई लेखक या कवि रचना करने बैठता है तब जीवन के प्रति उसकी जैसी भी आस्थाएँ होती हैं वे किसी न किसी प्रकार अपनी रचना में प्रतिबिंबित हो जाती हैं। साधारणत: जीवन के प्रति दृष्टिकोण दो प्रकार के होते हैं निवृतिमूलक तथा प्रवृत्तिमूलक। निवृतिमुलक दृष्टिकोण में लेखक जीवन में कर्म के प्रति कम विश्वास रखता है और संसार में नहीं रहना चाहता। संसार के संघर्ष या जीवन उसके लिए मूल्यहीन हैं। वह साधारणत: स्वर्ग के सपने देखता है। लेकिन प्रवृत्तिमूलक लेखक जीवन के प्रति आस्था रखता है। उनके जीवन का सबसे बड़ा लक्ष्य भी मानवतावाद पर आधारित है। कर्म पर वह सबसे ज़्यादा विश्वास करता है और बुद्धि एवं हृदय के सहयोग से जनकल्याण करते रखना वह अपने जीवन की अंतिम सिद्धि मानता है।

महादेवी का दृष्टिकोण मूलतः प्रवृत्तिमूलक है। उनके ही शब्दों में-"भावना ज्ञान और कर्म जब एक सम पर मिलते हैं तभी युगप्रवर्तक साहित्यकार प्राप्त होता है।"[1] उनको जीवन के प्रति पूरा विश्वास है और दूसरों को भी इसी विश्वास पर जिलाए रखना चाहती हैं। वे इस धरती को त्यागकर स्वर्ग की कामना नहीं करना चाहतीं। जीवन से उनका अगाध प्रेम हैऔर उसे वे स्थाई रखना चाहती हैं। इसी प्रवृत्तिमूलक दृष्टिकोण के कारण ही उनके आवास स्थान पर भीड़ ही भीड़ लगी रहती है।समाज, परिस्थिति अथवा भाग्य द्वारा उपेक्षित व्यक्तियों की अव्यक्त वेदना को स्वायत्त कर लेना और उनके प्रति एक सहज सहानुभूति प्रकट करना महादेवीजी की स्वाभावगत निजता है। यह व्यापक सहानुभूति उनके साहित्य तथा व्यक्तित्व को एक असाधारण भूमिका देने में सक्षम बन गई है। उन्होंने सौंदर्य की स्थिति संपूर्ण जीवन में मानी,इसी कारण ही उन्होंने अपने साहित्य में किसी नेता, ऐतिहासिक व्यक्ति या किसी महान स्त्री-पुरुष को न लेकर समाज के विपन्न, अनाथ, अछूते, अशिक्षित तथा निम्नवर्ग के व्यक्तियों का चित्रण किया। उनके सभी के सभी पात्र आपके इस जीवन- दर्शन के दयो तक हैं। ठकुरीबाबा के माध्यम से वेकहती हैं-" स्वर्ग हमका लना चही।"[2]

महादेवी वर्मा जीवन की विषमताओं से भयभीत होकर वैराग्य -साधना का बाना पहनकर संसार से पलायन या आत्महत्या करना नहीं चाहतीं। इसे वे कायरता समझती हैं। इसीलिए ही आपके सभी पात्र कितना कष्ट झेलते हुए भी संघर्षों को परास्त करके जीते हैं, चाहे भक्तिन हो या पर्वत पुत्र या मुन्नू की माँ सभी पीड़ित होकर भी जिजीविषा रहनेवाले हैं। उसी प्रकार महादेवी जी कर्म पर विश्वास करती हैं। जीवन के प्रति उनका गहरा अनुराग है। धरती के प्रत्येक पदार्थ से वे गहरा सम्बन्ध स्थापित करना चाहती हैं और करती हैं। अपनी आत्मा को वे संकीर्ण दायरे में बांधना नहीं चाहतीं,अपितु अन्य प्राणियों से संपर्क स्थापित करके उसका प्रसार करने में ही पूर्ण सार्थकता समझती हैं। आपकी यह विशेषता पाठकगण के लिए भी प्रबल प्रेरणा- स्रोत रही है।यही नहीं मनुष्य जीवन को वे पवित्र मानतीहैं।'यामा' की भूमिका में आप स्वीकार करती हैं कि "मेरे लिए तो मनुष्य एक सजीव कविता है।कवि की कृति तो उस सजीव कविता का शब्दचित्र मात्र है जिससे उसका अस्तित्व और संसार के साथ उसकी एकता जानी जाती है।"[3] महादेवी का मानवतावाद कभी भी यह सह नहीं करता कि मनुज को मनुज न समझा जाए। वे सभी को अपना संपूर्ण सौहार्द, सहानुभूति और संवेदनशीलता देती हैं।

समष्टि की इकाई होने के कारण साहित्यकार के जीवन-दर्शन और आस्था का निर्माण भी समाज विशेष में होता है। पर उसका सृजन-कर्म अपनी आस्था के साथ जैसा अभिन्न और प्रगाढ़ संबंध रखता है वैसा अन्य व्यक्तियों और उनके व्यवसायों में नहीं रहता। महादेवीजी मानती हैं किसच्चा साहित्य जीवन का अलंकार नहीं है वह स्वयं जीवन ही है।साहित्यकार सृजन के क्षणों मे तथा पाठक पढ़ने के क्षणों में उस जीवन में जीता है।इसलिए वे लिखती हैं कि "कला के क्षेत्र में जो यह जानता है कि स्वप्न झूठे नहीं होते, सौंदर्य पुराना नहीं होता वही चिरंतन सत्य की चिर नवीन प्रतिमाओं का निर्माण कर सकता है और निरपेक्ष आदर्श को असंख्य सापेक्ष रूपों में साकार कर सकता है।कला का उत्कृष्ट निर्माण द्वेष के पंखों पर नहीं चलता, अस्त्रों की झनझनाहट में नहीं बोलता और युद्ध के आँगन में

नहीं प्रतिष्ठित होता।.....कलाकार निर्माण देकर ध्वंस का प्रश्न सुलझाता है, ध्वंस देकर निर्माण का नहीं।"[4]

महादेवी वर्माजी सदा कर्म के प्रति गहरी आस्था रहती हैं। उन्होंने देखा कि भारतीय समाज में नारी की दिशा कहीं दीन-हीन है। समाज में उसका वैसा आदर नहीं दिया जाता है जैसा होना चाहिए। समाज का न्याय-विधान भी बड़ा विडंबनापूर्ण है। उसके पास सच्चाई का कोई मूल्य नहीं। समाज की अधिकांश जनता कूपमंडूकता में है। समाज के धनी वर्ग इससे काफी लाभ उठाते हैं। भारतीय सामाज के ये अभाव देखकर ही महादेवी जी कर्म क्षेत्र पर उतरीं। उनका यह विश्वास है कि यदि वह अपने लक्ष्य की सिद्धि इस जीवन में नहीं कर पाती तो अगले जीवन में फिर जन्म लेगी और पुनः संघर्षों का सामना करते हुए इस धरती को स्वर्ग बनाएँगी। इस प्रकार अटूट, अभय और आत्मविश्वास होने के नाते ही आपका संपूर्ण साहित्य आज भी उदात्त बना रहता है। भारतीय समाज का लौकिक स्तर पर विश्लेषण करके उन्होंने लिखा है-"पुरुष समाज का न्याय है स्त्री दया, पुरुष प्रतिशोधमय क्रोध है स्त्री क्षमा, पुरुष शुष्क कर्तव्य है स्त्री सरस सहानुभूति और पुरुष बल है, स्त्री हृदय की प्रेरणा।"[5] लेखिका को स्त्री-पुरुष के यही रूप स्वीकार्य है, क्योंकि विश्व कल्याण की नींव इन्हीं तत्वों पर अधिष्ठित है।लेकिन महादेवीजी कहती हैं कि हमारे स्वार्थ के कारण पुरुष मनुष्यता का कलंक है और स्त्री अपनी अज्ञानमय निश्चिन्त सहिष्णुता के कारण पाषाण जैसी उपेक्षणीय। दोनों के मनुष्यत्व-युक्त मनुष्य हो जाने से ही जीवन की कला विकास पा सकेगी, जिसका ध्येय मनुष्य की सहानुभूति, सक्रियता, स्नेह आदि गुणों को अधिक से अधिक व्यापक बना देना है। इसलिए लेखिका कहती हैं कि नारी को कभी भी अपने जन्मजात गुणों को नहीं भूलना चाहिए। इसीप्रकार उनकी मान्यता है कि दलित, शोषित, गरीब सब समाज के अभिन्न तथा शक्तिशाली अंग हैं। लेकिन वे संधर्ष से टूटे हुए हैं- "परीक्षाएँ जब मनुष्य के मानसिक स्वास्थ्य को क्षत-विक्षत कर ड़ालती हैं, तब उसमें उत्तीर्ण होने न होने का कोई मूल्य नहीं रह जाता है।"[6] यों महादेवीजी का जीवन-दर्शन ही उनका साहित्य है और उनका साहित्य ही उनका जीवन-दर्शन है। दोनों के बीच सीमा लगाना कठिन है या दोनों को अलग कर देना असंभवहै। असल में महादेवी के जीवन-दर्शन का सार उनके अपने ही शब्दों में यों स्पष्ट होता है "मेरे जीवन-दर्शन में मनुष्य प्रधान है। सत्य प्रधान है। अहिंसा भी प्रधान है। परंतु उन सब से ऊँची चीज़ है अभय, ताकि हम सत्य के लिए संघर्ष कर सकें, उस अहिंसा पर स्थिर रह सकें और यह न तभी संभव होता है जब हम यह जान लें कि हमारे भारत की आत्मा क्या है? मेरा दर्शन ऐसी कोई चीज़ नहीं है जो एक विशेष दिशा देती हो। सब मिला हुआ है उसमें अपना दर्शन भी है, बहुत कुछ अपना साहित्य भी है, और अपनी धरती की व्यथा भी है। इन सबको मिलकर जो दर्शन है इसको मैं क्या कहूँ मुझे मालूम नहीं।"[7]

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि मानव जीवन या मानव कल्याण पर अधिष्ठित दर्शन की प्रचारक महान साहित्यकार हैं महादेवीजी। आपका सारा साहित्य भी जीवन और जगत की व्यापक अनुभूति से अनुरंजित है। इसके नाते ही अपने महत्वपूर्ण विषयों की विवेचना बड़ी महानता, सजीवता एवं मार्मिकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। उनका चिंतन प्रत्येक दृष्टि से संतुलित एवं सूक्ष्म है। वे आज के तथाकथित आधुनिकतावादियों की भाँति युग के केवल एक अंश या समकालीन खंड को ही अपनी दृष्टि का केंद्र नहीं बनाती, अपितु वह उस अतीत एवं भविष्य की व्यापक परिधियों के संदर्भ एवं परिप्रेक्ष्य में देखते हुए अपनी दूरदर्शिता का भी परिचय देती है। उनकी दृष्टि सामाजिकता के धुंधली वातावरण तक ही सीमित नहीं है, अपितु वह उससे आगे और पीछे के दृश्यों को भी देख पाने की क्षमता से युक्त है। इसलिए उन्होंने आधुनिक समाज,धर्म,अर्थ,राजनीति, शिक्षा एवं ज्ञान-विज्ञान से संबंधित विभिन्न स्थितियों एवं परिस्थितियों का सूक्ष्म विश्लेषण करते हुए युगीन विषमताओं एवं समस्याओं के निदान एवं समाधान पूर्ण आत्मविश्वास के साथ प्रस्तुत किये हैं। व्यक्ति और समाज के रूप-रंग, हाव-भाव, दुख-दर्द आदि की सूक्ष्म एवं सशक्त अभिव्यक्ति जैसे महादेवी वर्मा की गद्य रचनाओं में हुई है वैसे अन्यत्र विरले ही हुईहै।इलाचन्द्र जोशी के शब्दों में-"महादेवी जैसी कवयित्री का कोई उदाहरण विश्व साहित्य के इतिहास में किसी भी युग में किसी भी देश में शायद ही पाया गया हो। उनके समान मौलिक चिन्तनशीलता और अछूती कल्पना का कोई उदाहरण कहीं सहज सुलभ नहीं है, केवल भावना के क्षेत्र में उन्होंने निराली रसमयता का प्लावन नहीं बहाया

है,वरन् वैचारिकता और चिन्तन के क्षेत्र में भी उनके समान प्रौढ़ और आत्मविश्वासपरायण नारी का जोड़ मिलना कठिन है। यह उपलब्धि केवल एक ही जन्म की साधना द्वारा सम्भव नहीं है, इसकेलिए युग-युग की सांस्कृतिक चेतना के जन्म-जन्मांतर विकास की अनिवार्य आवश्यकता है।"[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1.महादेवी वर्मा-साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध-पृ.सं.247, लोकभारती प्रकाशन,1995

2.महादेवी वर्मा- स्मृति की रेखाएँ-ठकुरी बाबा-पृ.सं 30, लोकभारती प्रकाशन-1986

3. महादेवीवर्मा-यामा- पृ.सं-भूमिका,लोकभारती प्रकाशन,1982

4.महादेवी वर्मा-साहित्यकार की आस्था तथा अन्य निबंध-पृ.सं.149, लोकभारती प्रकाशन,1995

5.महादेवी वर्मा-श्रृंखला की कड़ियाँ-पृ.सं.14 लोकभारती प्रकाशन,1997

6.महादेवी वर्मा-पथ के साथी-पृ.सं 37, लोकभारती प्रकाशन, 1999

7.महादेवी वर्मा-चिंतन के क्षण-पृ.सं.79 ,ऊरती भण्डारी,इलाहाबाद,1986

8.ड़ॉ.लक्ष्मणदत्त गौतम-महादेवी वर्मा-कवि और गद्यकार- पृ.सं 104, कोणार्क प्रकाशन, दिल्ली।

◆ असोसियेट प्रोफ़सर

हिंदी विभाग

सरकारी ब्रेण्णन कॉलेज,

तलश्शेरी, कण्णूर जिला, केरल।

हिन्दी कविता में बाल अधिकार और संकटग्रस्त बचपन

◆ **डॉ.सुजित एन.तंपी**

शोध सार- बच्चों की हालत भारत में सबसे ज़्यादा डरानेवाली है। आँकड़े बताते है कि कुपोषण, भुखमरी, बाल-मज़दूरी, बाल – यौन शोषण आदि के शिकार बच्चे सबसे ज़्यादा भारत में हैं। यहाँ के ज़्यादा बच्चे बाल अधिकारों से वंचित हैं। अमानवीय स्थितियों के बीच जीवन यापन करनेवाला बचपन पल-पल अपमानित हो रहा है।हिंदी कविता में बाल अधिकारों से वंचित संकटग्रस्त बचपन का खूब चित्रण हुआ है।

बीज शब्द

बाल अधिकार,संकटग्रस्त बचपन,संयुक्त राष्ट्र संघ, अंतर्राष्ट्रीय बाल दिवस,बाल-शोषण।

विषय प्रवेश:

विश्व की आबादी में एक तिहाई संख्या बच्चों की है। बच्चों के स्वतंत्र अस्तित्व और व्यक्तित्व होते हैं। पहले वे बड़ों के छोटे रूप ही माने जाते थे।लेकिन आधुनिक काल में उनके अधिकारों पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है । ध्यान से नज़र डालने से पता चलता है कि भारतीय समाज में समूचा बचपन संकटग्रस्त है। संपन्न परिवार का बच्चा एकाकीपन की पीड़ा झेल रहा है। उनके माता-पिता को उनसे बातें करने के लिए समय नहीं है। मध्यवर्ग का बच्चा माता-पिता की महत्वाकांक्षाओं की भेंट चढ़ रहा है। निम्न वर्ग का बच्चा अभावों का गरल पीने के लिए अभिशप्त है। बच्चे को शीत के प्रकोप, वर्षा की झड़ी और लू के थपेड़ों से बचाकर रखना ज़रूरी है, क्योंकि बच्चे देश के भविष्य हैं ।

बचपन की परिभाषा :

जन्म से लेकर किशोरावस्था (18 वर्ष) तक के आयुकाल को बचपन कहते हैं ।

बाल-अधिकर :

सबसे पहले बाल-अधिकारों पर वर्ष 1924 में जेनेवा घोषणा में चर्चा हुई।इसके बाद वर्ष 1948 में मानवाधिकार घोषणा-पत्र के अंतर्गत भी इस विषय पर समूचे विश्व का ध्यान आकृष्ट किया गया। फलस्वरूप 20 नवंबर, 1959 को संयुक्त राष्ट्र संघ में

पास होनेवाले एक प्रस्ताव में बाल–अधिकारों की घोषणा की गयी।भारत सहित 191 देशों ने इसका समर्थन किया। इसके अंतर्गत 18 वर्ष से कम आयु के बच्चों व किशोरों को शामिल किया गया और उनकी बुनियादी ज़रूरतें-पोषण, शिक्षा, स्वास्थ्य व सुरक्षा-मानी गईं। भारत सरकार ने वर्ष 1974 में बच्चों को देश की मूल्यवान संपत्ति मानी और एक राष्ट्रीय बालबोर्ड की स्थापना की। अप्रैल 1978 में बालवर्ष की घोषणा होने पर इस बोर्ड को पुनर्गठित किया और तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी खुद इसकी अध्यक्ष बनीं। सन् 1979 के अंतरराष्ट्रीय बाल वर्ष की तैयारी के दौरान यह अनुभव किया गया कि बच्चों से जुड़ी समस्याएँ अनंत हैं और मासूम बचपन करोड़ों की संख्या में पौष्टिक आहार व स्वच्छ पानी के अभाव में दम तोड़ देता है।

सन् 2002 में बच्चों पर हुए विशेष अधिवेशन में बच्चों के अधिकारों को लेकर जिन मुख्य बिंदुओं पर ध्यान केंद्रित किया गया, वे इस प्रकार हैं -

1)बच्चों के स्वास्थ्य को लेकर ज़्यादा सचेष्ट हुआ जाए।

2)बच्चों की शिक्षा की गुणवत्ता देखी जाए।

3)बच्चों को शोषण व हिंसा से बचाया जाए।

4)बच्चों में एड्स जैसी बीमारी की रोकथाम को प्राथमिकता दी जाए।

प्रतिवर्ष 20 नवंबर को 'अंतर्राष्ट्रीय बाल अधिकार दिवस'के अवसर पर संयुक्त राष्ट्र संघ के 'बाल अधिकार घोषणापत्र' के अनुसार बच्चों के मूल अधिकारों के संरक्षण की बात कहते हैं।वे मूल अधिकार निम्नलिखित हैं –

1)अस्तित्व का अधिकार

2)सम्मानपूर्वक जीने का अधिकार

3)परिवारों की सामाजिक और आर्थिक हैसियत के मुताबिक सही पालन –पोषण का अधिकार

4)स्वास्थ्य सुविधाओं और चिकित्सा का अधिकार

5)गंभीर बीमारी,विकलांगता आदि की स्थिति में विशेष देखभाल का अधिकार

6)शिक्षा का अधिकार

7)खेल- कूद व आराम का अधिकार

8)अभिव्यक्ति का अधिकार

9)आर्थिक शोषण और यौन- शोषण से संरक्षण का अधिकार तथा

10)दंगे,युद्ध जैसी आपात स्थितियों में सुरक्षा की प्राथमिकता का अधिकार।

हिन्दी कविता में बाल-अधिकार और संकटग्रस्त बचपन:

'बार-बार आती है मुझको मधुर याद बचपन तेरी

कैसे भूला जा सकता है बचपन का अतुलित आनंद'

सुभद्राकुमारी चौहान की ये पंक्तियाँ सबको सुपरिचित हैं। हर व्यक्ति की ज़िन्दगी का सबसे सुन्दर काल बचपन है।लेकिन भारतीय समाज में इस 'अतुलित आनंद' से वंचित बच्चों की संख्या भयावह है।उच्च वर्ग,मध्य वर्ग और निम्न वर्ग के बच्चे विविध कारणों से बाल-अधिकारों से वंचित हैं। 'हिन्दी कविता में संकटग्रस्त बचपन' विषय पर कहाँ तक चर्चा हुई है ? आगे हम देखेंगे –

1.बचपन के अतुलित आनंद से वंचित बच्चे

मलिन बस्तियों में रहनेवाले और सड़क पर गुज़र-बसर करनेवाले बेसहारे बच्चों की संख्या लगभग 50 हज़ार है। इनमें 15 हज़ार बेघर हैं।यूनिसेफ ने भी अपनी रिपोर्ट में कहा है कि पूरे विश्व के नगरों में बच्चों की संख्या बढ़ती है, लेकिन पर्याप्त सुविधाएँ और सेवाएँ समुचित तरीके से उपलब्ध न होने के कारण इन बच्चों की बुनियादी ज़रूरतें पूरी नहीं हो रही हैं। घर-घर चौका-बासन करनेवाली मुनिया की भीगी आँखों का दर्द 'मुनिया' कविता में रमेशचंद्र पंत ने लिखा है -

'है गरीब वह
पिता नहीं है
घर-घर करती काम
दिन भर ही तो
खटती रहती

नहीं तनिक आराम
नहीं देखता कोई
घुटती सांसों मुनियाकी
सबकी छुट्टी हुई
नहीं पर, छुट्टी मुनिया की।' (पृ.21)

बच्चों को खेल-कूद और आराम की दुनिया से जुड़ाने का पूरा अधिकार है,लेकिन हमारे देश के अधिकांश बच्चों को इसका अवसर कम मिलता है।

2.अकेलापन

मध्य वर्ग और उच्च वर्ग के घरों में बच्चे अकेलापन झेल रहे हैं। भौतिक सुख-सुविधाओं की अधिकाधिक लालसा के चलते मनुष्य ने आज जिस मशीनी ज़िन्दगी को स्वेच्छा से अपना लिया है,उससे सबसे ज़्यादा त्रस्त हुआ है बच्चा। एक मासूम बच्ची की मर्मस्पर्शी चाह उषा यादव से 'बहुत बुरा लगता है मम्मी' कविता में यों प्रस्तुत किया गया है–

' बहुत बुरा लगता है मम्मी
मुझे तुम्हारा आफिस जाना
घर पर लौटूँ और उस समय
दरवाज़े पर ताला पाना
जाने कितनी बातें उस पल
चाहा करती तुमसे कहना
माँ,तुम कल घर पर ही रहना।' (पृ.8)

3.शिक्षा का बोझ

बच्चों को शिक्षा का अधिकार है।लेकिन हमारे यहाँ शिक्षा बच्चों के लिए भारी बोझ सा लगता है। बच्चे मशीनी ज़िन्दगी जीने को विवश हैं। उनके पास न तो बचपन की सहजता रहती है और न उस सुख को लूटने का समय।माता-पिता अपने इच्छानुसार बच्चे को इंजीनियर,डॉक्टर आदि बनाना चाहते हैं। बच्चों की अपनी इच्छा इस मामले में प्रायः नज़रअंदाज़ की जाती है।भगवती प्रसाद द्विवेदी ने 'हम बच्चों पर अत्याचार' शीर्षक कविता में इसी मुद्दे को उठाया है –

'किसी को क्या परवाह
स्वयं हमारी भी कुछ चाह
कविता में रुचि ,तो देते हो ,
डाक्टर बनने की कड़ी सलाह'(पृ.36)

4.अस्तित्व का संकट

भारतीय जनजीवन में पुत्र जन्म को हमेशा कन्या जन्म से ज़्यादा महत्व मिलता है। घर में बेटे का जन्म यदि उल्लास की घटना माना गया, तो बेटी के जन्म पर परिवार के जनों के चेहरे बुझ जाते हैं।कन्या को लेकर यह भाव रहा कि बड़ी होकर शादी में सब लूट-खसोट कर चल देगी। आम जन के मन का यह सोच हिंदी कविता में बालिकापरक उपेक्षा के रूप में प्रायः प्रकट है। समाज का पुरुषवादी और पितृसत्तात्मक सोच ही इसके मूल में है।इसलिए हमारे यहाँ लिंग जाँचने के बाद माँ के गर्भ में ही मादा भ्रूण को नष्ट कर देने की साजिश रची जाती है। उस वक्त एक अजन्मी बालिका का यह करुण चीत्कार उषा यादव की कविता 'काश ! जन्म तुम लेने देते' में सीधे हमारे अंत:स्थल पर दस्तक देता है–

'बारिश की पहली फुहार बन,
तपन धरा की हम हर लेते
काश ! जन्म तुम लेने देते ।
पैदा होने का हक जैसा
तुम सब का था मेरा भी था
दुनिया में आने का सपना
चाव भरा बस हेरा ही था ।
तुमने उसको चूर- चूर कर
क्यों मेरा अस्तित्व मिटाया,
अंश तुम्हारा ही तो थी मैं !
मुझ पर रंचक तरस न आया।
पक्षी तक अपने अंडों को कितनी तन्मयता से सेते
काश ! जन्म तुम लेने देते' (पृ.52)

5.बालश्रम और शोषण

बच्चों को आर्थिक शोषण और यौन-शोषण से संरक्षण का अधिकार है।लेकिन एक रिपोर्ट के अनुसार भारत में लगभग साढ़े ग्यारह करोड़ बच्चों का बचपन मेहनत-मज़दूरी के शिकंजे में जकड़ा है। नरेश सक्सेना अपनी कविता 'अच्छे बच्चे' में बालश्रम और बाल शोषण पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं –

'कुछ बच्चे बहुत अच्छे होते हैं
वे गेंद और गुब्बारे नहीं माँगते
मिठाई नहीं माँगते
ज़िद नहीं करते हैं और
मचलते तो हैं ही नहीं
बड़ों का कहना मानते हैं
वो छोटों का भी कहना मानते हैं
इतने अच्छे होते हैं
इतने अच्छे बच्चों की तलाश में रहते हैं हम
और मिलते ही उन्हें घर
ले आते हैं अक्सर
तीस रुपये महीने और खाने पर।' (पृ.27)

बेबस-लाचार कामगार बच्चों के किस्म देखने हों तो अशोक चक्रधर की 'बूढ़े बच्चे'कविता की ये पंक्तियाँ हमारे सामने हैं –

'फेरी वाले,चूडी वाले
फल वाले,ठेले वाले,
शरबत,पलंग वाले
पालिश वाले,मालिशवाले
जरदोजी,कढाईवाले
भिश्ती हैं दर्जी हैं
पंसारी,नाई हैं
खींच रहे गाडी हैं
या फिर कबाडी हैं
वरक कूटते हैं ये मिठाई भी बनाते हैं
बावर्ची हैं दिन भर रोटियां पकाते हैं।' (पृ.45)

परवीन शाकिर की कविता 'एक मुश्किल सवाल' में बालश्रमिकों के जीवन की त्रासदी देखिए–

'टाट के पर्दे के पीछे से
एक बारह-तेरह साला चेहराझांका
वह चेहरा
बाहर के पहले फूल की तरह ताज़ा था
और आँखें
पहली मोहब्बत की तरह शफ्फाक
लेकिन उसके हाथ में
तरकारी काटते रहने की लकीरें थीं
और उन लकीरों में
बर्तन मांजने की राख जमी थी
उसके हाथ
उसके चेहरे से बीस साल बड़े थे।' (पृ.63)

उपसंहार

हर व्यक्ति,परिवार और देश के लिए बालक अमूल्य है। हर बच्चे का अपना स्वप्निल संसार,अपने मनोरथ और सरोकार होते हैं,जिन्हें समझना हमारे लिए बहुत ज़रूरी है। लेकिन हमारे देश में बचपन की स्थिति संकटग्रस्त होती जा रही है। सम्मानपूर्वक जीवन यापन करना हर बच्चे का जन्मसिद्ध अधिकार है, पर हमेशा ऐसा नहीं होता है।बालश्रम के अनगिनत रूप आज हमें देखने को मिलते हैं।हाशिये पर रहनेवाले बच्चे शिक्षा से वंचित हैं।ये बच्चे भूखों और अभावों में पलते हैं। ये बच्चे असमय ही प्रौढ़ बन जाते हैं। हिंदी कवियों ने इन विषयों को अपनी कविताओं के लिए चुना है और जनता को जागृत करने की चेष्टा की है। संकटग्रस्त बचपन को बचाने में यदि अपने – अपने स्तर पर हर साधन संपन्न व्यक्ति जागरूक हो जाए तो समस्या खत्म होने में देर न लगेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :

1.संपादक - डॉ.सुरेन्द्र मोहन –बचपन-उदय प्रकाशन, दिल्ली –प्र.सं-2005.

2.संपादक- कुसुम यादव –बाललीला – उदय प्रकाशन, दिल्ली –प्र.सं.2000.

3.प्रो.मधूसूदन त्रिपाठी- बाल अधिकार तथा बाल शोषण-हरि प्रकाशन,दिल्ली –प्र.सं.2012.

4.कैलाशनाथ गुप्त ,डॉ.सरिता शाह- मानवाधिकार : संघर्ष, संदर्भ एवं निवारण –अभिव्यक्ति प्रकाशन, दिल्ली –प्र.सं.2011.

5.प्र.सं. मीरा गौतम-अंतिम दो दशकों का हिन्दी – साहित्य – वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली – द्वि.सं.2008.

◆असोसिएट प्रोफेसर,
स्नातकोत्तर हिंदी विभाग व शोधकेंद्र,
यूनिवर्सिटि कालेज, तिरुवनंतपुरम, केरल।
मोब : 6238657722
ईमेल nthampisujith@gmail

बाल संवेदना के परिप्रेक्ष्य में 'दहलीज़ पर'

◆ बिजी बी

संवेदना मस्तिष्क की सामान्य एवं सरलतम प्रक्रिया है। भौतिक जगत की वस्तु किसी ज्ञानेंद्रिय को प्रभावित करती है तो चेतन हो जाती है। इसी प्रक्रिया को हम संवेदना कहते हैं। अंग्रेज़ी में संवेदना को Sympathy तथा मनोविज्ञान में Sensation कहते हैं।

संवेदनशीलता सच्चे कलाकार की पहचान है। वर्तमान समस्याओं एवं परिवेशगत अनुभूति और संवेदना को लेकर साहित्य-सृजन करनेवाले समकालीन महिला कहानीकार हैं उर्मिला शिरीष। मानवीयता उर्मिला जी की लेखनी का केंद्र बिंदु है। पारिवारिक संबंध एवं उससे संबंधित सभी समस्याओं एवं उससे उत्पन्न तनाव उनके साहित्य का प्रमुख विषय है। 'दहलीज़ पर' उनके प्रमुख कहानी संग्रह 'निर्वासन' की पहली कहानी है। इसमें अकेले हुए बच्चे के मन पर पड़ी मानसिक संवेदनाओं का मर्मस्पर्शी चित्रण हुआ है।

यह एक ऐसे बच्चे की कहानी है, जिसके पिता की मृत्यु हो जाने के बाद उसकी माँ दूसरी शादी करती है। अब तक वह माँ के साथ नाना-नानी के घर में रहता आया, जहाँ उसके मामा- मामी, मौसियाँ और ममेरे भाई-बहन हैं। दो बच्चे के पिता से उसकी माँ की शादी हुई है। उसे नये घर में अपनत्व नहीं मिलता है, जो है एक सरकारी आवास। छोटे-छोटे कमरोंवाला एक घर। एक कमरे में नये पापा और माँ, एक कमरे में उसके दोनों नये भाई और उनकी दादी सोती थीं। वह कहाँ लेटे? अकेला हो गया। कौन उसको अपने साथ सुलाएगा? वे दोनों अपनी-अपनी टेबल पर पढ़ रहे हैं, उसे हाथ पर रखकर लिखना नहीं आता था। वह सोचता- नानी के घर में तो उसकी राजकुमारों की तरह इज़्ज़त होती थीं। नानी अपने सामने बिठाकर खाना खिलाती थीं। बिना बाप की औलाद है सोचकर सब लोग उसे खूब-खूब प्यार किया करते थे। उसकी पढ़ाई केलिए ट्यूटर लगा दी गई थी। यहाँ आकर उसे कुछ समझ में ही नहीं आ रहा था कि वह कैसे खाएगा?"[1] वह इतना अकेलापन अनुभव नहीं कर सकता था। उसकी ठेस एवं अंतर्द्वन्द्व उसकी माँ समझ नहीं रही थी, जब तक सब कुछ उसकेलिए पलटता हुआ लगा। बचपन ही जीवन का एक महत्वपूर्ण एवं प्रमुख अंग माना जाता है।

बच्चों के मन की बातें समझना आसान कार्य नहीं है। उन्हें समझने केलिए हमें उनकी बात को ध्यान से सुनना और उनमें से मेल-मिलाप बढ़ाना पड़ता है। तब हम उनके मन की संवेदनाओं को एक हद तक समझ पाएँगे।

मात्र सोलह वर्ष की आयु में विधवा हो गयी थी उसकी माँ। दूसरों को खुश देखकर उसका पूरा बदन ईर्ष्या से जलने लगता था। ईर्ष्या की आग उसे जलाती थी। माँ के लंबा वैधव्य भोगने के बाद अब पुन: शादी हो जाने पर माँ के चेहरे पर दुख या शर्म नहीं था। खुशी ही थी, माँ उसे छोड़कर चली जाएगी किसी और घर में। यह सोचकर वह बेचैन और दुखी हो रहा था। उसने माँ से दुख के कारण सीधे बात नहीं की थी। माँ को उसकी उदासी तथा दुख का खयाल ही नहीं आया था। वह नयी चमकीली साड़ी पहने, माथे पर बिंदी लगाये हुए थी। आँखों में खुशी झलक रही थी। माँ का यह परिवर्तन बच्चे के मन में बहुत दुख पैदा कर देता है। जन्म से लेकर इस समय तक उसके साथ रही माँ उसके साथ गुस्से में बोलने लगी। नए घर में माँ सुबह सब केलिए चाय लेकर आयी, तब उसके चेहरे पर चमक और हँसी थी। नयी दादी, बुआ, पापा तथा दोनों भाईयों से हँस-हँसकर माँ बातें कर रही थी। बच्चों को दूर से आवाज़ दी- उठो ब्रश करो, चाय पिओगे? माँ इतनी जल्दी भूल गयी है कि वह नाश्ते के साथ दूध पीता है। जब से चश्मा लगा था तब से उसको नाश्ते के साथ दूध दिया जाता था। उसे याद आयी कि वहाँ माँ की हर सुबह झगड़े से शुरू होती थी। कभी भी माँ ने मामी को एक कप चाय नहीं दी।

कितनी बीमार रहती थी मामी, तब भी माँ अपने हिस्से का काम करके दरवाज़ा बन्द करके सो जाती थी। यहाँ तो बुआ के हाथ से काम छीनकर स्वयं कर रही है।

यहाँ माँ अपनी संतान को भूलकर नए पति का और उस परिवार का प्यार पाना चाहती है। वह चाहती है कि बेटा अपने मामा के घर चला जाए, क्योंकि वह अपने बेटे का अधिकार इस कीमत पर हरगिज़ नहीं चाहती है। वह चाहती है कि बेटे के कारण उसके नए दाम्पत्य जीवन में कोई दरार न आए या तनाव न पैदा हो। यहाँ आत्मकेंद्रित एवं स्वार्थी माँ को भी देख सकते हैं। माँ को पता ही नहीं चला कि बेटे के मन को कितना अवसाद पैदा हुआ है। नये पापा ने अपने बेटों को चपकाया, उनकी पीठ थपथपायी, होमवर्क और स्कूल के बारे में पूछा। ये सब देखकर बाबा बच्चे का कोमल मन दुर्बल बन गया। "माँ कहती हँस करो, बात किया करो, फिर धीमे से आकर डपटते मुँह लटकाकर बैठे रहोगे तो कौन बात करेगा? घुन्ने बने रहोगे या बात भी करोगे? यहाँ सब लोग कितना हँसते हैं? कोई तुम्हारी नखरे नहीं उठाएगा।"[2] माँ की बातें सुनकर बेटा गुमसुम हो जाता है। सब समय माँ कहता सबके साथ ऐडजस्ट करो।' क्या एडजस्ट करेगा वो? वह इसको तोड़कर सबके बीच आ जाना चाहता है, मगर नहीं आ पाता। वह अकेले दहलीज़ पर खड़ा रहता है... मनोवैज्ञानिकों के अनसार "Child psychology deals not only with how chidren grow physically, but also seeks to better understand their mental emotional and social development as well."[3]

बाल्यावस्था में बालक व्यक्तिगत एवं सामाजिक व्यवहार सीखना प्रारंभ कर लेता है। उसकी आदतें, व्यवहार, रुचियाँ, इच्छाएँ आदि को प्रकट करने का प्रयास करता है। यह केवल शारीरिक विकास को नहीं, मानसिक एवं शिक्षा की दृष्टि से अव्यंत महत्वपूर्ण समय है। इस आयु में अपनी हर आवश्यकता केलिए दूसरों पर आश्रित रहता है, लेकिन बाबा ने तो सिर्फ उसके पिता नहीं अपनी माँ को भी खो दिया। उसने सोचा था कि माँ की शादी के बाद उसे मोक्ष होगा, लेकिन माँ की दूसरी शादी उसके लिए हमेशा सजा रही। वहाँ से कोई माँग नहीं थी। शर्त थी कि बच्चे को माँ के साथ रखना होगा। वे लोग तौयार हो गये। उसको जैसे दो बेटे वेसे तीसरा। बाबा को नहीं मालूम हुआ कि उसका घर कौन सा है, कौन सा नहीं। वह दूसरे के हाथों का खिलौना बना। नानी के साथ रहते समय वह राजकुमार था। लेकिन नए घर में वह याचक सा बन गया था, क्यों कि शादी को रखी गयी शर्त उसे याचक बनाने की शर्त रही होगी।

स्वार्थी माँ उसकी संवेदना पहचान नहीं सकती है। लेकिन उसकी मामी यह सब पहचान लेती है और उसे अपने घर ले जाती है। मामी उसके नए पापा से कह देती है "वह यहाँ बचपन से रह रहा है, इन बच्चों को ही अपना भाई-बहन मानता है .. आप बरा मत मानिएगा। उसका सामान कल भिजवा दें, बाबा को मैं यही रखना चाहती हूँ.. मेरे लिए जैसे तीन; वैसे चार... उसकी माँ का जब मन हो तो आकर मिल लिया करे।"[4]

बाबा को तो यह पुर्नजन्म जैसा था। उसका मन माँ नहीं समझ लेती, मामी कितने प्यार से सब समझ लेती है। बाबा की मानसिक समस्याएँ वे ठीक ढंग से समझ पाती हैं और उसके मन को शांति मिलती है।

उर्मिला जी ने इस कहानी में जीवन की जटिल समस्याओं का यथार्थ चित्रण मनोवैज्ञानिक ढंग से अपनी अनोखी लेखन कुशलता से की है। अकेलापन के फलस्वरूप बच्चे के मन में किस तरह की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं और किन-किन परिस्थितियों और समस्याओं से उसे गुज़रना पड़ता है आदि का विश्लेषण प्रस्तुत कहानी में ऊर्मिला जी ने किया है। यहाँ माँ ने स्वतंत्रता एवं स्वार्थ की चिंता से अपने दायित्व को पालने में उदासीनता दिखायी है, जिसके

परिणामस्वरूप बाबा जैसे अनेक बच्चों के जीते-जागते उदाहरण हमारे समाज एवं आसपास में उपस्थित हो जाते हैं। संक्षिप्त रूप से कहें तो 'दहलीज़ पर' कहानी यहाँ खतम होती है, लेकिन असली ज़िदगी में वहीं बाबा की कहानी शुरू होती है या चल रही होती है।

संदर्भ

1.'निर्वासन', उर्मिला शिरीष, प्रकाशक - भारतीय ज्ञानपीठ, पृ.सं.12, 2003

2. वही, पृ.सं.16।

3. https://www.manchester.a(.UK)

4. 'निर्वासन' उर्मिला शिरीष, प्रकाशक -भारतीय ज्ञानपीठ, पृ.सं.20, 2003

◆शोधार्थी, हिन्दी विभाग,

यूनिवेर्सिटी कॉलेज, तिरुवनन्तपुरम, केरल

माजुली संस्कृति और वैष्णव परंपरा

◆ डॉ.देवप्रकाश मिश्रा

माजुली संस्कृति में वैष्णवी परंपरा की प्राचीनतम और अधुनातन परंपरा की संवेदना को समझने लिए यह आवश्यक है कि उसके सत्रों (उपखंडो) का अध्ययन करें।

बीज शब्द : माजुली द्वीप, सत्र, नव वैष्णववाद।

संभवतः कामरूप[1] के प्राचीन साम्राज्य का एक हिस्सा होने के नाते, जैसा कि विभिन्न किंवदंतियों और बाद के समय में, चुटिया और भुइयां क्षेत्रों से प्रमाणित है, माजुली हमेशा एक स्वंत्रत्र क्षेत्र था, हालांकि इसका जनसंख्या घनत्व निश्चित रूप से बहुत कम था। नकुल चंद्र भुइयां ने अपने बारा भुयंर चामू बुरांजी में कहा है कि "ब्रह्मपुत्र की मुख्य धारा दिहिंग के रास्ते में स्थानांतरित होने के बाद, इसके दाहिने किनारे पर दिहिंग के मुहाने पर स्थित कई गाँव माजुली द्वीप का हिस्सा बन गए। 15वीं-16वीं सदी के असम के प्रमुख वैष्णव उपदेशक और समाज सुधारक शंकरदेव (1449-1568) ने सबसे पहले बेलागुड़ी धुवाहाट नामक स्थान पर अपना सत्र स्थापित किया था और माजुली द्वीप के शिष्यों में प्रमुख माधवदेव (1498-1596) ने सोलहवीं शताब्दी की पहली तिमाही में धर्म परिवर्तन कराया। परिणामस्वरूप इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ने 17वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में वहां नव-वैष्णववाद के विकास के अगले अध्याय का मार्ग प्रशस्त किया। इस तथ्य से प्रेरणा लेते हुए, और इस तथ्य से कि यह स्थान विद्रोही वैष्णव भावना को समायोजित करने के लिए काफी अलग था (और अभी भी है), असम के अहोम राजाओं ने 13वीं शताब्दी के पहले भाग से शुरू करके लगभग छह सौ वर्षों तक राज्य पर शासन किया।[2] फिर, एक शाही आदेश द्वारा इसे वैष्णव प्रचारकों का घर बना दिया गया ताकि सभी प्रचारकों को द्वीप में अपना स्थान मिल सके।" इस प्रकार, माजुली धार्मिक उपदेशकों और उनके सत्रों नामक मठों की भूमि बन गई। तब से बड़ी संख्या में लोग मठों की स्थापना या तो राजा के माध्यम से या प्रचारकों के व्यक्तिगत प्रयास से की गई थी। ऐसा कहा जाता है कि एक बार माजुली में लगभग सौ ऐसे सत्र थे। इस प्रकार समय के साथ, माजुली वैष्णव मठों और वैष्णव गुरुओं का स्थान बन गया , और इसलिए, एक तीर्थ स्थान को उचित रूप से 'हिंदू धर्म का वेटिकन' कहा जाता है। 1° इसी तथ्य के कारण, इस द्वीप को 'एटाका महंतर थान' कहा जाने लगा।" यह सबसे प्रभावशाली सामाजिक-सांस्कृतिक है।

जो सत्र[3] थे, और अभी भी भूमि के संगठन हैं, और प्रत्येक व्यक्ति - बूढ़े या जवान- किसी न किसी सत्र से संबंधित हैं। गैर हिंदू और आदिवासी परिवारों के सदस्य भी यहां सत्र संस्कृति की छाप के तहत हैं। न केवल उनके नैतिक जीवन को, बल्कि उनकी भौतिक संस्कृति को भी आकार दिया। वैष्णव मठ सभी प्रकार की कला और शिल्प, संगीत और नृत्य, और प्रदर्शन कला

के अन्य रूपों जैसे- नाट्य प्रदर्शन, जिसे 'भगोंग' कहा जाता है, के केंद्र हैं। सत्रों में नृत्य भी खेला जाता है जिसे सत्रिया नृत्य कहा जाता है, जो शास्त्रीय असमिया नृत्य रूपों का निर्माण करता है। इसी तरह, बरगीत नामक गीत, क्रमशः शंकरदेव और उनके शिष्य माधवदेव द्वारा रचित असमिया शास्त्रीय गीत का सबसे प्रतिष्ठित वर्ग बनाते हैं। यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि वैष्णव मठों की भूमि होने और मुख्य भूमि के शहरी समाज से अलग होने के कारण, द्वीप के लोगों ने अजीब व्यवहार पैटर्न विकसित किया - जीवन जीने की सादगी, संतुष्ट और ग्रहणशील स्वभाव। वास्तव में, वे विशिष्ट मूल्य-प्रणाली के साथ एक विशिष्ट सामाजिक इकाई बनाते हैं जो ध्यान देने योग्य है।

प्रचुर मात्रा में खाली भूमि वाला एक पृथक क्षेत्र होने के कारण, माजुली ने मध्य युग से चारों ओर से आनेवाले सभी आप्रवासियों को आश्रय प्रदान किया, विशेष रूप से सुवनसिरी नदी के पार इसकी उत्तरी सीमा से। उत्तरी पहाड़ियों पर उत्पन्न होने वाली इस नदी ने प्रवासन मार्ग के रूप में कार्य किया है प्राचीन काल से; और यह इस नदी मार्ग के माध्यम से एक खंड था।

संदर्भ

1. असम का एक जिला।
2. असम में अहोम राजाओं का शासन काल – 1226 से 1828 तक।
3. मठ

◆ हिन्दी विभाग, आर्यभट्ट महाविद्यालय, दक्षिण परिसर, दिल्ली विश्वविद्यालय।

भारतेन्दु हरिश्चंद्र की राष्ट्रचेतना पर आधारित पत्रकारिता

◆ **पूनम कुमारी#, डॉ.अनिल कुमार निगम***

सारांश

आधुनिक हिन्दी साहित्य के पितामह कहे जानेवाले भारतेन्दु हरिश्चंद्र एक कुशल पत्रकार के रूप में भी जाने जाते हैं। भारतेन्दु जी के हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में आगमन ने पत्रकारिता को एक नया आयाम दिलाया| हिन्दी साहित्य और हिन्दी पत्रकारिता को विकसित करने तथा उसे ऊँचाइयों तक पहुँचाने में भारतेन्दु हरिचन्द्र की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। हिन्दी पत्रकारिता को राष्ट्रचेतना के भाव से ओतप्रोत करने में तथा अपने समकालीन सारे पत्रकारों में भी राष्ट्र के प्रति प्रेम की भावना का संचार करने में भारतेन्दुजी का योगदान अग्रणी था। भारतेन्दु जी ने हिन्दी पत्रकारिता को माध्यम बनाकर सती प्रथा, बाल विवाह, सूदखोरी, छुआछूत आदि कुरीतियों और आडंबरो को खत्म करने की कोशिश की। इतना ही नहीं, लोगों में स्त्री शिक्षा और विधवा विवाह आदि के प्रति जागरूकता लाने की भी कोशिश की। महज़ पैंतीस साल के जीवनकाल में भारतेन्दु ने राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, आध्यात्मिक और साहित्यिक सुधार पर बल दिया और इसी कारण उनके समकालीन हिन्दी साहित्यकारों और विद्वानों ने 1850 ईसवी से 1900 ईसवी तक के युग को 'भारतेन्दु युग' की संज्ञा दी है। इस युग को नवजागरण का काल भी कहा जाता है क्योंकि इस काल में साहित्यकारो के भावो में बदलाव आया और साहित्य का झुकाव स्वदेश की भावना, राष्ट्र प्रेम की भावना, हिन्दी प्रेम की भावना और सामाजिक समस्याओं की तरफ हुआ।

हिन्दी साहित्य में सर्वोपरि स्थान रखनेवाले भारतेन्दु जी का हिन्दी के प्रति प्रेम को हम उनकी इस रचना से समझ सकते हैं- "निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल। बिन निज भाषा ज्ञान के मिटे ना हिय

को शूल ।।" भारतेन्दु जी अपनी इस रचना से बताते हैं कि उन्नति तभी संभव है जब इंसान को अपनी भाषा का ज्ञान होगा| बिना मातृभाषा के ज्ञान के हृदय की जो पीड़ा है वह समाप्त नहीं हो सकती।

प्रस्तावना

साहित्य और पत्रकारिता समाज का वह आईना होता है जो समाज की दशा और दिशा तय करने की शक्ति रखता है। इन दोनों पक्षो के माहिर भारतेन्दु जी दूरदर्शी थे जिन्होंने जन-मानस में राष्ट्रीयता की भावना का बीजारोपण किया।

पवित्र नगरी काशी में 1850 ईसवी में जन्मे जनवादी साहित्यकार भारतेन्दु जी ने अपनी लेखनी को गंगा का वह प्रवाह बनाया, जो हमेशा समाज के कल्याण के लिए प्रवाहित हुई। भारतेन्दु हरिश्चंद्र जी के पिता बाबू गोपाल चन्द्र अपने समय के अच्छे कवियों में गिने जाते थे और गिरधरदास के नाम से कविता लिखा करते थे। भारतेन्दु जी की कर्मस्थली जीवनपर्यंत वाराणसी ही रही। वे धन, वैभव और प्रतिष्ठा से भरपूर काशी के सेठ अमिचन्द के वंश में पैदा हुए, परंतु भारतेन्दु जी का जीवन सुखद कभी नहीं रहा, क्योंकि जब वे मात्र पाँच वर्ष के थे तो उनकी माता जी का देहांत हो गया था। जब वे दस वर्ष के हुए तो उनके पिताजी का भी स्वर्गवास हो गया। माताजी की मृत्यु के बाद उनकी सौतेली माताजी से भी उन्हें स्नेह नहीं मिल पाया। लेकिन कहीं न कहीं उनकी परिस्थिति ने उन्हें समय से पहले परिपक्व, गंभीर और संवेदनशील ज़रूर बना दिया था। साहित्य और संस्कार की विरासत उन्हें अपने पिता जी से मिली हुई थी। उन्होंने मात्र पाँच वर्ष की आयु में अपने पिता को एक छंद लिखकर दिखाया था जो उन्हें बहुत पसंद भी आया था। वह दोहा इस प्रकार था;

लै ब्योढ़ा ठाढ़े भए श्री अनिरुद्ध सुजान।
वाणासुर की सेन को हनन लगे भगवान॥

भारतेन्दु जी ने हिन्दी साहित्य को नयी दिशा और दशा प्रदान की। शायद यही वजह है कि जब देश अंग्रेज़ों का गुलाम था और अपनी बात लोगों के सामने रख पाना टेढ़ी खीर हुई, तब उन्होंने अपने नाटक, व्यंग्य, कविता और पत्रकारिता को अपना माध्यम बनाकर लोगों में जाग्रति लाने को ठाना। हिन्दी साहित्य को जन- जन से जोड़ने का श्रेय भारतेन्दु जी को ही जाता है। उन्होंने अपनी समकालीन हिन्दी भाषा में आधुनिकता का मिश्रणकर उसे और निखारा। भारतेन्दु पुष्टि सम्प्रदाय के कृष्णभक्त थे। इससे उनकी कविता का सबसे बड़ा भाग वेष्णव साहित्य के अंदर आता है। उनकी जीवन-आयु मात्र पैंतीस वर्ष ही थी, पर उन्होंने अपनी इसी आयुसीमा में हिन्दी साहित्य को बुलंदियों तक पहुँचाने में कोई कसर नहीं छोड़ी। इतना ही नहीं, अंग्रेज़ों द्वारा दी गयी मजिस्ट्रेट की पदवी भी उन्होने बस इसलिए ठुकरा दी, कि वह अंग्रेज़ी और अंग्रेज़ों की शोषण- नीतियों के खिलाफ़ थी। 1976 ईसवी में उनके साहित्यिक योगदान को देखते हुए भारत सरकार के द्वारा एक डाक टिकट भी ज़ारी किया गया।

शोध उद्देश्य

प्रस्तुत शोधपत्र का उद्देश्य तत्कालीन भारत में भारतेन्दु जैसे पत्रकार, समाज सुधारक और दूरदर्शी व्यक्ति से आज की युवा पीढ़ी को अवगत कराना है। इसके अलावा भारतेन्दु जी का साहित्य और समाज-सुधार के प्रति झुकाव की भी व्याख्या करनी है।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोधपत्र में विषयवस्तु की विश्लेषण-पद्धति का प्रयोग किया गया है। आँकड़ों का संग्रह विभिन्न पुस्तकों, वेबसाइट, शोधपत्रों और साहित्यिक रचनाओं द्वारा किया गया है| यह शोध पूरी तरह से विभिन्न सामग्रियों का विश्लेषण कर निष्कर्ष तक पहुँचा है|

हिन्दी साहित्य में भारतेन्दु का योगदान

अनंत प्रतिभा के धनी एवं दूरदर्शी भारतेन्दु हरिचन्द्र जी का वास्तविक नाम 'हरिश्चंद्र' था और 'भारतेन्दु' नाम उन्हें उपाधि में मिला हुआ था। भारतेन्दु का मतलब “भारत का चाँद” होता है जो वे वाकई में थे| भारतेन्दु जी ने साहित्य और समाज का

हर कोना झाँका और हिन्दी साहित्य को विकसित करने में अहम भूमिका निभायी| हिन्दी साहित्य और नाटक को एक नया स्वरूप दिया| भारतेन्दु हरिश्चंद्र जी ने अपने छोटे से जीवनकाल में 70 से भी अधिक पुस्तकें, नाटक, यात्रा वृतांत, उपन्यास एवं ग्रंथ लिखे| उनके दोहे, उनकी भाषा, उनका निबंध आदि आज भी युवकों के लिए प्रेरणास्त्रोत हैं| भारतेन्दु कोई सीखे-सिखाये कवि नहीं थे, बल्कि वे प्रकृत्यः कवि थे।

हिन्दी साहित्य के विद्वानों ने 1850 ईसवी से 1900 ईसवी तक के युग को 'भारतेन्दु युग' की संज्ञा दी है, क्योंकि इसी युग में हिन्दी साहित्य का सर्वांगीण विकास हुआ तथा भारतेन्दु जी से प्रेरित होकर साहित्यकारों की एक जमात तैयार हुई थी, जो "भारतेन्दु मण्डल" नाम से जानी जाती थी। इस युग के उत्साही कवियों और साहित्यकारों में क्रांति की एक लहर दौड़ी, जो उनकी रचनाओ में देश के प्रति प्रेम और अंधविश्वासों के प्रति आक्रोश के माध्यम से देखने को मिलती है। भारतीय नवोत्थान और हिन्दी जागरण के इस स्वर्णिम युग की कल्पना करना आज के परपेक्ष्य में महज एक स्वप्न होगा। क्योंकि आज जिस तरह से हिन्दी अपने अस्तित्व को खोयी जा रही है, भारतेन्दु जी जैसे हिन्दी भाषा के उद्धारक की अति आवश्यकता है| भारतेन्दु को केवल एक साहित्यकार कहना गलत होगा, क्योंकि वे एक युगनेता थे जिनके पीछे साहित्य प्रेमियों का जमावड़ा होता था|

जब उन्नीसवी दशक में दो तरह की हिन्दी शैलियों का बोलबाला था, पहली फारसीनिष्ठ हिन्दी और दूसरी संस्कृतनिष्ठ हिन्दी तब भारतेन्दु जी ने हिन्दी साहित्य का दामन थामा और खड़ी- बोली को हथियार बनाकर दोनों शैलियों का मिलाप करवाया| पिता के हिन्दी साहित्य के प्रति प्रेम को देखकर बचपन से ही साहित्य सेवा का भाव मन में जागा था और उन्होंने हिन्दी भाषा को सम्पूर्ण जीवन देने का मन बना लिया था| मात्र अठारह वर्ष की उम्र में उन्होने "कविवचनसुधा" नमक पत्रिका प्रकाशित किया। 1873 ईसवी में 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' नामक पत्रिका निकालना शुरू किया जिसमें कविता, पुरातत्त्व, उपन्यास, ऐतिहासिक, आलोचना, साहित्यिक, राजनीतिक तथा दार्शनिक लेख, कहानियाँ और व्यंग्य आदि प्रकाशित हुआ करते थे। उनकी 'बालबोधिनी' पत्रिका स्त्री-शिक्षा और जागरूकता को समर्पित थी, जो उनकी दूरदर्शिता को बताता है|

भारतेन्दु जी द्वारा रचित कुछ प्रमुख नाटक हैं- वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, सत्य हरिश्चन्द्र, श्री चंद्रावली,विषस्य विषमौषधम्, भारत दुर्दशा, नीलदेवी, सती प्रताप आदि। भारतेन्दु जी को हिंदी के अलावा संस्कृत, अंग्रेज़ी, मराठी, उर्दू, बांग्ला, गुजराती और उर्दू भाषाएँ भी आती थीं| प्रेम फुलवारी, प्रेमप्रलाप, विजयनी विजय, बैजयन्ती, भारत बीणा, सतसई श्रृंगार, प्रेमाश्रु वर्णन, माधुरी, प्रेम मालिका, प्रेम तरंग, प्रेमसरोवर आदि भारतेन्दु जी की प्रमुच काव्य रचनाएँ हैं। वे मुख्यतः गद्य में खड़ी बोली और पद्य में व्रजभाषा का उपयोग किया करते थे। उनका परिवार वैष्णव संस्कार से प्रभावित था| उनकी कविताओं में प्रेम, भक्ति और श्रृंगार की झलक मिलती है क्योंकि वे भक्तिकाल से पूर्व रीतिकाल के कवियों से प्रेरित थे। राधा और कृष्ण का प्रेम, ईश्वर के स्वरूप का वर्णन, परमात्मा के प्रति प्रेम आदि उनकी रचनाओं में देखे जा सकते हैं।

अपनी हर रचना को कृतार्थ करने के लिए भारतेन्दु जी चार प्रकार की भाषा शैलीयों का उपयोग किया करते थे। पहली भाषा शैली उद्बोधन शैली है, इसका उपयोग वे प्रायः जन उद्बोधन करने के लिए करते थे| दूसरी शैली अलंकृत शैली है, जिसका अलंकार यानि वाक्य को सजाने के लिए और सुंदर रूप देने के लिए प्रयोग करते थे। तीसरी "भाषा शैली भावनात्मक है, जिसका उपयोग भाव को दर्शाने के

लिए करते थे। चौथी और अंतिम शैली व्यंग्यात्मक है जिसका व्यंग्य और मुहावरे के द्वारा समाज को आईना दिखाने के लिए प्रयोग किया जाता था।

सुमित्रा नन्दन पंत जी भारतेन्दु जी की साहित्य सेवा से अति प्रभावित रहे थे और अपनी रचना में उहें साहित्य-निर्माण का श्रेय इस प्रकार देते हैं।

"भारतेंदु कर गए,भारती की वीणा निर्माण।
किया अमर स्पर्शों में, जिसका बहुविधि स्वर संधान।।"

एक पत्रकार के रूप में भारतेन्दु जी

एक कुशल पत्रकार समाज में बदलाव लाने के लिए प्रयास करता है। 'भारतेन्दु युग' की शुरुआत भारतेन्दु द्वारा संपादित पत्रिका "कविवचन सुधा" से मानी जाती है। यह एक क्रांतिकारी शुरुआत थी, जिसमें एक नवजागरण के युग की नींव रखी गयी थी| 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' पत्रिका जो पहले 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' के नाम से छपती थी, भारतेन्दु जी के सम्पादन में ही 1873 ईसवी में शुरू हुई थी।

पत्रकारिता की विभिन्न विधाओ में से एक बाल पत्रकारिता को आरंभ करने का श्रेय हरिश्चंद्र जी को ही है। उन्होंने मासिक पत्रिका 'बाल दर्पण' की शुरुआत 1882 ईसवी में किया और इस पत्रिका के माध्यम से बच्चों के मनसिक विकास पर ज़ोर डाला तथा उनके अंदर सामाजिक, ऐतिहासिक और पौराणिक कथाओं का सिंचन कर भविष्य के स्तम्भ को सुदृढ़ करने की कोशिश भी की।

उन्होंने "भारत दुर्दशा" नाटक में भारत की तत्कालीन स्थिति की चर्चा कर लोगों के चेताया, तो स्त्री-शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए "बालाबोधिनी" नामक पत्रिका निकाली। यह पत्रिका सम्पूर्ण भाषाओं में पहली महिला पत्रिका थी, जो स्त्री की दयनीय स्थिति की व्याख्या कर रही थी और साथ ही साथ उनके स्थिति में सुधार की भी बात कर रही थी| अपनी 'अंधेर नगरी' रचना में उन्होने समाज में व्याप्त कुरीतियों की निंदा की। इतना ही नहीं, अछूतोद्धार के बारे में उन्होंने अपनी कई रचनाओं में लिखा भी है|

उनकी हिन्दी, हिन्दू और हिंदुस्तान की कल्याण कामना को इस पंक्तियों के द्वारा समझा जा सकता है।

'चहहूँ जो साँचहू नीज कल्यान।
जपहूँ निरंतर एक जबान।
हिन्दी, हिंदू, हिंदुस्तान।।'

भारतेन्दु जी पत्रकार तो थे, साथ ही साथ उन्हे समाजसुधारक कहना बिलकुल गलत नहीं होगा, क्योंकि उन्होने जनजागरण के लिए भी कई कार्य किये| गरीबी उत्थान, स्त्री शिक्षा, विधवा विवाह, जातिप्रथा और सतीप्रथा जैसी कुरीतियों का वर्णन उनकी रचनाओं में मिलता है। भारतेन्दु हमेशा स्त्री - पुरुष समानता के पक्षधर थे। उन्होंने सामाजिक सुधार के साथ-साथ आर्थिक सुधार की भी बात की है। एक बार बरेली के दादरी के मेले में अपने व्याख्यान में उन्होने कहा था कि कुरीतियों और अंधविश्वासों के भाव को त्यागकर आपसी एकता के भाव को विकसित करें तथा शिक्षा और औद्योगिक विकास को बढ़ावा दें।

भारतेन्दु जी की भारतेन्दु मंडली भी उनसे प्रभावित होकर उनके देशप्रेम, समाज सुधार आदि के भावों का अनुसरण अपनी रचनाओं में करती थी| भारतेन्दु ने अपनी रचनाओं को नये विषयों से जोड़ा तथा जो कविता राज दरबार और आभिजात्य वर्ग तक सीमित होकर रह गयी थी उसे सभी वर्गों से जोड़ा, यह एक उत्तम बदलाव ही था|

भारतेन्दु जब मात्र सात वर्ष के थे तब देश के पहले स्वतन्त्रता-संग्राम का आगाज हुआ था| उन्होने बचपन से ही भारत की शोषित जनता के दर्द को करीब से देखा था| उन्होने आगे चलकर भारत के स्वतन्त्रता-संग्राम में भी उल्लेखनीय योगदान दिया| कई बार तो उन्हें अंग्रेज़ो का कोपभाजन भी होना पड़ा था| "भारत दुर्दशा" की कुछ पंक्तियाँ जो उनके भाव को प्रकट करती हैं, वे इस प्रकार हैं;

'रोअहुं सब मिलिकै आवहुं भारत भाई।

हा, हा ! भारत दुर्दशा देखी न जाई॥'

आधुनिक हिन्दी साहित्य के मशहूर साहित्यकार रामविलास शर्मा उन्हें निर्भीक पत्रकार बताते हुए लिखते हैं- "देश में रुढ़िवाद का खंडन करना और महंतों और पुरोहितों की लीला प्रकट करना हरिश्चंद्र जैसे निर्भीक पत्रकारो का ही काम है।"

रामविलास शर्मा जी उन्हें जनवादी बतलाते हुए ऐसा भी कहते हैं कि भारतेन्दु पुरानी और संक्रमित प्रथा को ठुकराते हुए उनमें सुधार लाने के और आधुनिकता के पक्षधर हैं।

भारतेन्दु ने सूदखानेवाले ज़मींदारों और महाजनों को भी अपनी रचनाओं से नहीं छोड़ा है और उन पर इस प्रकार व्यंग्य किया है;

'चूरन अमले जो सब खाते,
दूनी रिश्वत तुरत पचाते।
चूरन सभी महाजन खाते,
जिससे जमा हजम कर जाते।'

भारतेन्दु के हिन्दी के प्रति प्रेम का अंदाज़ा उनके द्वारा हंटर कमिशन के सामने दी गयी गवाही से लगाया जा सकता है, जिसमें उन्होंने कहा था कि हमारी अदालती भाषा न तो शासकों की भाषा है और न ही प्रजा की|

निष्कर्ष

एक सफल कवि, उत्तम दर्जे के नाटककार और कुशल संपादक के रूप में, भारतेन्दु हरिचन्द्र, भारतीय नवजागरण के अग्रदूत बने। अपने साहित्य के ज़रिये गरीब, शोषित और लाचार जनता का चित्रण कर समाज को आईना दिखाया और सच्ची व जागरूक पत्रकारिता का उदाहरण पेश किया। उन्होंने कई साहित्यक संस्थाएँ भी खड़ी कीं ताकि हिन्दी भाषा का सम्पूर्ण उद्धार हो।

हिन्दी साहित्य को धनी बनानेवाले भारतेन्दु जी जन्मे तो बड़े धनी घर में थे, पर उनके परोपकारी स्वभाव और उदारता ने उन्हें जीवन के अंतिम दिनों में ऋणग्रस्त कर दिया था और वे क्षय रोग के शिकार हो गए थे। बड़ी ही कम आयु में नवयुगीन हिन्दी साहित्य के दाता भरतेन्दुजी का 6 जनवरी 1885 ईसवी में स्वर्गवास हो गया। अपने जीवन के अंतिम क्षणों में वे 'कुछ आप बीती कुछ जगबीती' नामक रचना लिख रहे थे, जिसे पूरा नहीं कर पाया था। बाद में "परीक्षा गुरु" के नाम से लाला श्रीनिवास दास ने उसे पूरा किया| उनके हिन्दी साहित्य के योगदान को भूलना नामुमकिन है। उनके प्रगतिशील विचार आज की पीढ़ी के लिए प्रेरणास्रोत हैं। भारतेन्दु भले ही हमारे बीच नहीं हैं, पर हम आज जो हिन्दी भाषा बोल रहे हैं कहीं न कहीं इसका श्रेय उन्हें ही जाता है|

संदर्भ

1. भारतेन्दु हरिश्चंद्र भारतकोश -, ज्ञान का हिन्दी महासागर (bharatdiscovery.org)
2. भारतेंदु हरिश्चंद्र कविता कोश - (kavitakosh.org)
3. भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का जीवन परिचय, साहित्यिक परिचय एवं भाषा शैली -HindiFiles.com
4. भारतेंदु हरिश्चन्द्र - जीवन परिचय - StudywithGyanPrakash
5. हिन्दी साहित्य का इतिहास आधुनिक काल साहित्य : भारतेन्दु हरिश्चंद्र एवं उनका मण्डल / विकिपुस्तक wikibooks.org
6. भारतेन्दु हरिश्चंद्र का काव्य -IASbook
7. भारतेन्दु हरिश्चंद्र विकिपीडिया - wikipedia.org

◆ # पूनम कुमारी, असिस्टेंट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ जर्नलिज़्म एंड मास कम्युनिकेशन, आई.एम.एस गाज़ियाबाद, यूनिवर्सिटी कौर्सेस कैम्पस, आध्यात्मिक नगर, गाज़ियाबाद , उत्तर प्रदेश, 201015

* डॉ. अनिल कुमार निगम, प्रोफेसर और हेड ऑफ डिपार्टमेंट, स्कूल ऑफ जर्नलिज़्म एंड मास कम्युनिकेशन, आई.एम.एस गाज़ियाबाद यूनिवर्सिटी कौर्सेस कैम्पस, आध्यात्मिक नगर, गाज़ियाबाद , उत्तर प्रदेश- 201015

कबीर,नानक,दादू और सुन्दरदास के काव्यों में सामाजिक आदर्शः एक अनुशीलन

◆डॉ. कृष्णा मीणा

शोध-सारांश- समाजदर्शन मानवीय मूल्यों, आचार-संहिताओं तथा सामाजिक आदर्शों की रचना करता है जिससे व्यक्ति जीवन को समग्रता में पा सके। समाजदर्शन समाज के उन मौलिक तत्वों और नीतियों को समझने का प्रयास करता है, जो सामाजिक ऐक्य, सामाजिक प्रगति और सामाजिक विघटन को प्रभावित करते हैं। साहित्य इन तत्वों को कला की दृष्टि से प्रस्तुत करता है। संत कबीर, गुरु नानक, दादू दयाल और सुन्दरदास के साहित्य का अध्ययन करने पर स्पष्ट होता है कि उनकी रचनाओं में सामाजिक दृष्टिकोण के सभी प्रमुख तत्व मौजूद हैं। उनकी कविताएँ न केवल धर्म और श्रद्धा पर ज़ोर देती हैं, बल्कि सामाजिक न्याय, समानता और भाईचारे के संदेश भी देती हैं। इन कवियों ने अपनी रचनाओं में मानवता, सदाचार और सामाजिक न्याय के मूल्यों को प्रमुखता से उभारा है। उन्होंने जाति-पाँति और ऊँच-नीच भेदभाव को समाप्त करने के लिए अपने काव्य के माध्यम से जागरूकता फैलाने का कार्य किया। इस प्रकार उनका साहित्य न केवल उनके समय में, बल्कि आज भी सामाजिक सुधार और मानव कल्याण के लिए मार्गदर्शक सिद्ध हो रहा है।

बीज शब्द: संत कबीर, संत नानक, संत दादू, संत सुन्दरदास, सामाजिक आदर्श।

समाजदर्शन मानव-संबंधों की भौतिक प्रकृति और सामाजिक संबंधों का अध्ययन करता है। समाजदर्शन मानव-जीवन के सामाजिक पहलुओं के महत्व की व्याख्या करने का प्रयास करता है।[1] भक्तिकाव्य के संदर्भ में जिस समाजदर्शन का उल्लेख किया जाता है, उसकी प्रक्रिया संश्लिष्ट है। भारतीय समाजदर्शन में मुख्य रूप से धर्मों का विभाजन तथा वर्ण-व्यवस्था आती हैं।[2] संत कवियों ने सभी युगीन चुनौतियों से प्रभावित होकर अपनी रचनाओं में समाजदर्शन के विभिन्न पहलुओं का चित्रण किया। परशुराम चतुर्वेदी का कथन है कि "संतों की आध्यात्मिक देन चाहे कुछ भी कही जा सके, उनकी सामाजिक देन भी कम नहीं है और उनकी रचनाओं पर इस धारणा के साथ विचार करने पर ही हमें जान पड़ेगा कि उनका महत्व विश्व-कल्याण की दृष्टि से भी बहुत बड़ा कहा जा सकता है।"[3] निर्गुण काव्य-धारा में कबीर, नानक, दादू और सुन्दरदास का महत्वपूर्ण स्थान है। आज भी इन संतों की वाणियों का समाज में प्रभाव है। कबीर की कई साखियाँ तो लोकोक्तियों के रूप में परिवर्तित हो चुकी हैं। दादू की अनेक साखियाँ भी अत्यधिक लोकप्रिय हैं। नानक देव की वाणी भी पंजाब में विशेष रूप से पूजित है।

संत कबीर, नानक, दादू और सुन्दरदास का समाज-दर्शन एक ऐसा उन्मुक्त दोषरहित आदर्श समाज की मान्यता को स्वीकार करता है, जहाँ ऊँच-नीच, जाति-पाँति, छुआछूत, अस्पृश्यता आदि का कहीं स्थान न हो।[4] गुरुद्वारों में नानक-वाणी का निरन्तर पाठ इस लोकप्रियता का प्रमाण है। श्री राघवदास कृत 'भक्तमाल' में इन महान् संतों- कबीर, नानक, दादू और सुन्दरदास- का वर्णन सूरज,इन्द्र,चन्द्र और दिनकर की समता करते हुए किया गया है।'नानक सूरज रूप भूप सारे परकासे। मधवादास कबीर असर सूसर वरषासे।। दादू चंदसरुप, अमी करि सब को पोषै। दादू दीनदयाल के चेले दोय पचास। केई उडगण केई इन्दु हैं,दिनकर सुन्दरदास।।'[5]

संतों ने आदर्श समाज के निर्माण के लिए समाज की प्रथम इकाई व्यक्ति का चरित्रवान,

उच्चादर्शवान, सर्वगुण सम्पन्न और परोपकारी होना आवश्यक मानते हैं।[6] 'जा के मुह माया नहीं नाही रूप कुरूप। पुहुप वास तैं पातरा ऐसा तत अनूप।।'[7] इसी तथ्य को गुरु नानक देव ने भी अत्यंत रोचक शैली में प्रदिपादित किया है 'जपुजी' में वे कहते हैं- 'ता कीआ गलीआ कथीआ न जाहि। जाको कहै पिछै पछुताइ।'[8]

सभी संत एकेश्वरवाद के प्रबल समर्थक थे। निर्गुणवादी कवियों ने युग की आवश्यकता के अनुसार हिन्दू और मुसलमान दोनों को एकेश्वरवाद का संदेश सुनाया। कबीर ने मुसलमानों को संबोधित करते हुए कहा- 'हमारे राम रहीम करीम केसो, अलह राम सति सोई। विसमिल मेटि विसम्भर एकै और न दूजा कोई।।'[9] गुरु नानक के कथनानुसार वह एक ही हैं-'ओं सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू। अकाल मूरति, अजूनी सैम गुर प्रसादि।।'[10] संत दादू ने भी अपनी विनम्र उक्ति से उसी अभेदत्व की ओर संकेत किया है- 'अलष इलाहौ एक तूं, तूं हीं राम रहीम। तू हीं मालिक मोहन, केसौ नांउं रहीम।।'[11] संत सुन्दरदास कहते हैं-'सुन्दर दैत कछु मति जानहुं एकई ब्यापक बेद बतावै।'[12]

संत कवियों ने हिन्दू-मुस्लिम साम्य को, आदर्श स्वरूप को ग्रहण करने पर बल दिया।[13] कबीर, दादू एवं नानक ने दोनों जातियों के मध्य एकता एवं सद्भावना के भाव उत्पन्न किये थे-"ब्रह्म में भेदभाव की प्रवृत्ति नहीं है। वह सार्वभौमिक है। अतः उसे मंदिर और मस्जिद की सीमाओं में सीमित कर देना असंगत है।"[14] "तुरूक मसही देहुरै हिन्दू युहुठा राम खुदार्य। जहाँ मसीहि नाहि तहं काकी ठकुराई।।"[15] कबीर, नानक, दादू और सुन्दरदास की दृष्टि में मानवता ही एकमात्र जाति है, सत्य ही एकमात्र धर्म है, सर्वव्यापी परमात्मा ही एकमात्र ईश्वर है।[16]

संत कवियों की अनेक रचनाओं में ईश्वर और अल्लाह में अभेद को इंगित किया गया है- 'दास मलूक' कहा भरमौ तुम, राम रहीम कहावत एकै।'[17];'हिन्दू आषै राम कौ मूसलमान पुदाइ।'[18] संत कबीरदास ने हिन्दू-मुस्लिम विचारधाराओं के बीच में एक मध्यम मार्ग निकाला, जिसमें सृजनहार को ईश्वर और अल्लाह दोनों की संज्ञा दी। 'राम, रहीमा, करीम, केसव, अल्लह राम सति सोई, बेद कुरान बिसम्भर एकै और न दूजा कोई।'[19] 'दुइ जगदीस कहाँ से आया? कहु कवने भरमाया? अल्लह राम करीमा केसौं, हरि हज़रत नाम धराया।'[20] कबीरदास जी के अनुसार, ब्रह्म-साधना के लिए अन्यत्र भटकने की कोई आवश्यकता नहीं है- 'मनु करि मका किबला करि देही। बोलन हारू परम गुरु ऐही। कहु रे मुलाँ बाँग निवाज। एकै मसीति दसै दरवाज।'[21] संतों ने हिन्दू और मुसलमान को एक हो जाने की प्रेरणा दी है- 'कबीर मेरी जाति को सब कोइ हंसने हारू। बलिहारी इस जाति कौ जिह जपियो सिरजनहारू।।'[22]

भारतीय मान्यताओं के अनुसार ईश्वर में 'तेज' है और अल्लाह में 'नूर' है। दादूदयाल ने अपनी वाणियों में तेज-रूपी कमल को नूर का दिल बताया है,जहाँ राम और रहमान का एक साथ निवास दर्शाया गया है-'कोई राम,कोई अल्लाह सुनावै,पै अल्लाह-राम का भेद न पावै।'दादूदयाल ने स्पष्ट कहा है-'दादू हिन्दू मारग कहै हमारा, तुरक कहै रह मेरी। कहा पंथ है कहो अलख का, तुम तो ऐसी हेरी।।'[23]

संत सुन्दरदास के अनुसार जन्म लेनेवाला मनुष्य विशेष जातियों के चिह्न लेकर पैदा नहीं होता। हिन्दू-मुस्लिम का भेद बुद्धि-भ्रम से महसूस होता है-'चिह्न बिना सब कोई आये इहां भये दोई पंथ चलाये। हिन्दू तुरक उठया यह भ्रमा। हम दोऊ का छाड्या धर्मा।।'[24] 'हिन्दू की हदि छाड़ि कै तजी तुरक की राह। सुन्दर सहजै चीन्हियां एकै राम अलाह।।'[25] सभी संतों ने जाति-प्रथा का घोर खंडन किया। कबीर, नानक, दादू, और सुन्दरदास ने समाज में समता की

भावना पर बल दिया-'द्वै पष हिंदू तुरक की बिचि आप संभालै। ज्ञान षडग गहि झूझता मधि मारग चालै।।'[26]

संतों ने मानवता की भावना जागृत करके जनता की विचारधारा को एक नवीन दिशा में मोड़ने का प्रयत्न किया।[27] नानक: 'खत्री ब्राह्मन सूद्र बैस की, जाति पूछि नहिं देता दाता।' संत कबीर: 'तुम कत बाह्मन, हम कत शूद? हम कत लोहू, तुम कत दूध?' 'जो तू करता बरन बिचारा, जनमत तीन डंड अनुसारा, जनमत शूद्र, मूये पुनि शूदा, कृतिम जनेउ घालि जग धुंद्रा। जो तुम ब्राह्मन बह्मनी जाये, अवर राह ते काहे आये? कारी पियरी दूहहु गाई, तिनकर दूध देहु बिलगाई।।'[28] 'कौम छतीस एक ही जाती, ब्रह्म-बीज का सकल पसारा। ऊँच-नीच इस विधि है लोई, कर्म-कुकर्म कहावै सोई।'[29]

संतों ने अपनी वाणियों के माध्यम से वर्ण-व्यवस्था का कड़ा विरोध किया[30]-'अति पुनीत ऊँचे कुल कहिए, सभा माहिं अधिकाई, इनतें दीच्छा सब कोउ माँगै, हँसी आवै मोहिं भाई। पाप-कटन को कथा सुनावै,कर्म करावै नीचा, बूडत दोउ परस्पर देखा,गहे हाथ जम घींचा। गाय बधै तेहि तुरका कहिए, उनते वे क्या छोटे? कहहि कबीर,सुनौ हो संतो,कलि के ब्राह्मण खोटे।'[31] संत कवियों ने समस्त जाति-पाँति संबंधी भेदभावों का खंडन किया है। उस युग के निर्गुण-सगुण संतों की यह सामान्य उक्ति बनी हुई थी-'जाति,पांति पूछै नहिं कोई। हरि को भजै सो हरि का होई।।'[32] किसी भी जाति या वर्ण विशेष में जन्म लेने से ही कोई ईश्वर-प्राप्ति का पात्र अथवा अपात्र नहीं हो जाता। गुरुनानक देव भी जाति पूछना व्यर्थ बताते हैं-'जाणहू जोति न पूछहु जाति आगै जाति न हे।।'[33] दादूजी की मान्यता है कि सच्चे संतों की एक ही जाति होती है-'जे पहुँचे ते कहि गये, तिन की एकै बात। सबैं सयाने एकमति, तिन की एकै जात।।'[34]

निर्गुण संत परंपरा में संत सुन्दरदास एकमात्र ऐसे संत हुए हैं जिन्होंने ब्राह्मण,क्षत्रिय,वैश्य और शूद्र को परिभाषित करते हुए वर्ण-व्यवस्था का समर्थन किया है-'अहंकार चांडाल बहुत हिंसा कौ कर्ता। मन कौ शूद्र सुभाव कर्म माना विस्तर्ता।। बुद्धि वैश्य यह होइ करै व्यापार जहां लौं। चित्त सु क्षत्रिय जानि नृपति नहिं लोक तहां लौं।। यह ब्राह्मण साक्षी आतमा सदा शुद्ध निर्मल रहै। तुरिया अतीत जानहुं उही ब्रह्म रूप सुन्दर कहै।।'[35] संत सुन्दरदास जी ने प्रतीकों के माध्यम से वर्ण-व्यवस्था को नया जामा पहनाया जो अन्य संत कवियों से थोड़ा हटकर था-'अंत्यज देह स्थूल रक्त मल मूत्र रहे भरि। अस्थि मांस अरू मेद चर्म आच्छादित ऊपरि।। शूद्र सु लिंग शरीर बासना बहु विधि जामहिं। वैश्य सु कारण देह सकल ब्यापार सु तांमहि।। यह क्षंत्री साक्षी आतमा तुरिय चढ़े पहिचानिये। तुरिया अतीत ब्राह्मण उही सुन्दर ब्रह्म बषानिये।।'[36]

संत कबीर, नानक, दादू और सुन्दरदास के साहित्य के अनुशीलन के पश्चात् यह प्रमाणित होता है कि संत कवियों ने समाज को व्यापक स्तर पर जाना और समझा है। उनकी रचनाओं में समाजदर्शन के प्रायः सभी तत्व विद्यमान हैं।[37] भक्ति, दर्शन और समाजदर्शन के विभिन्न पक्षों को संत कवियों ने अपने काव्य में स्थान देकर जनमानस में अपनी अमिट छाप छोड़ी। संतों द्वारा प्रस्तुत सामाजिक आदर्श के माध्यम से समाज-कल्याण के साथ व्यक्तिगत कल्याण भी सम्भव है। इनकी वाणियों ने जनसाधारण को पथ-प्रदर्शक की भाँति प्रकाश प्रदान किया। इन संत कवियों द्वारा प्रस्तुत विश्वबंधुत्व से आविष्ट सामाजिक आदर्श युग-युगांतरों तक मानव समाज को एक सूत्र में बाँधकर रखेंगे। आज भी हमें उसी 'सर्वजन हितकारी' सामाजिक एकता की भावना को आदर्श मानकर सामाजिक सुधार करना होगा।

संदर्भ सूची:-

1.मैकेंजी, जे.एस. समाज दर्शन की रूपरेखा, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्कारण-2009, पृ. 12

2.ब्रह्मचारी, रामाश्रय दासः सन्त कबीर और उनका

दर्शन, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ.5
3.महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ.4
4.ब्रहाचारी, रामाश्रय दासः सन्त कबीर और उनका दर्शन, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ॰ 221
5.शर्मा, वासुदेवः सन्त कवि दादू और उनका पंथ, शोध-प्रबन्ध प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1963, पृ॰ 263
6.ब्रह्मचारी, रामाश्रय दासः सन्त कबीर और उनका दर्शन, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली संस्करण 2002, पृ॰ 222
7.दास, श्यामसुन्दरः कबीर ग्रन्थावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण संवत् 2025 वि॰, पृ. 57
8.मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संस्करण संवत् 2017 वि॰, पृ. 97
9.दास, श्यामसुन्दरःकबीर ग्रन्थावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, संस्करण संवत् 2025 वि॰, पृ॰ 58
10.मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संवत् 2017 वि॰, पृ॰ 79
11.शर्मा, वासुदेवः सन्तकवि दादू और उनका पंथ, शोध प्रबन्ध प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1969, पृ. 266
12.मिश्र रमेशचन्द्र-सुन्दर ग्रन्थावली भाग :2 किताबघर, नई दिल्ली संस्करण 2011 पृ. 952
13.महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ॰ 217
14.दीक्षित, त्रिलोकी नारायणः सुन्दर दर्शन, किताब महल, नई दिल्ली, संस्करण 1953, पृ॰ 143
15.दास, श्यामसुन्दरः कबीर ग्रन्थावली, ल¨कभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2011, पृ॰ 106/58
16.ब्रह्मचारी, रामाश्रय दासः सन्त कबीर और उनका दर्शन, प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, संस्करण 2002, पृ॰ 253
17.हरि, वियोगीः सन्तवाणी, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2006, पृ॰ 24
18.महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ॰ 213
19.वर्मा, रामकुमारः संत कबीर, साहित्यभवन-, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण 1958, पृ॰ 126
20.हरि, वियोगीः सन्तवाणी, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2006, पृ॰ 24
21.वर्मा, रामकुमारः संत कबीर, साहित्यभवन-, इलाहाबाद, चतुर्थ संस्करण 1958, पृ॰ 209
22.दास, श्याम सुन्दरः कबीर ग्रन्थावली, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी, दसवाँ संस्करण, संवत् 2025 वि॰, पृ॰ 258
23.सिंह, रवीन्द्र कुमारः सन्तकाव्य की सामाजिक - प्रांसगिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1994, पृ॰ 123
24.मिश्र, रमेशचन्द्रः सुन्दरदासभारतीय साहित्य के - निर्माता, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, संस्करण 2001, पृ॰ 101
25.हरि, वियोगीः सन्त सुधासार-, सस्ता साहित्य मंडल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1956 पृ॰ 567
26.मिश्र, रमेशचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग-1, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ॰ 1018
27.शर्मा, सुमनः मध्यकालीन भक्ति आन्दोलन का सामाजिक विवेचन, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम संस्करण, 1974, पृ॰ 201
28.हरि, वियोगीः सन्तवाणी, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2006, पृ॰ 70

29.वही, पृ॰ 74
30.सिंह, रवीन्द्र कुमारः संतकाव्य की सामाजिक-प्रासंगिकता, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1994, पृ॰ 155.
31.हरि, वियोगीः सन्तवाणी, सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 2006, पृ॰ 86
32.शर्मा, वासुदेवः सन्त कवि दादू और उनका पंथ, शोध प्रबंध प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1969,पृ. 27
33.मिश्र, जयरामः नानक वाणी, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, संस्करण संवत् 2017 वि॰, पृ॰ 248
34.शर्मा, वासुदेवः सन्त कवि दादू और उनका पंथ, शोध प्रबंध प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण 1969, पृ॰ 278
35.मिश्र, रमेशचन्द्रः सुन्दर ग्रन्थावली, भाग-2, किताबघर, नई दिल्ली, संस्करण 2011, पृ॰ 1164
36.वही, पृ॰ 1163
37.महता, विमलः निर्गुण कवियों के सामाजिक आदर्श, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली, संस्करण 1976, पृ॰ 5

◆सहायक आचार्य,
गार्गी कॉलेज (दिल्ली विश्वविद्यालय),
सिरीफोर्ट रोड, नई दिल्ली,
मोबाइल नंबर: 8700583341
ई-मेल: krishna.hindi@gmail.com

आर्थिक लूट और विषमता के विरुद्ध आदिवासी कविताएँ

◆ **वेद प्रकाश सिंह**

आदिवासी समाज हमेशा से जंगलों में रहता आया है। जंगलों की खाद्य वस्तुओं, पेड़-पौधों, तमाम औषधियों से आदिवासी एकदम जानकार होते हैं। लेकिन आज लगातार होनेवाले विकास के कारण उनकी सामाजिक एवं सांस्कृतिक हालत बदतर होती जा रही है। आज उपभोक्तावादी, बाज़ारवादी, पूँजीवादी तथा मुख्यधारा का समाज लगातार उनके क्षेत्र में अतिक्रमण करता तथा उनके संरक्षित प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करता जा रहा है। अपने संसाधनों की सुरक्षा को तथा अपने अस्तित्व के लिए जब कोई आदिवासी हथियार उठाने लगता है तो सरकारी महकमा उसे नक्सली घोषित करके, उनके लोगों को तथा उनकी संपत्तियों को हथिया लेता है तथा मनमाने ढंग से उनका शोषण शुरू कर देता है।

कोई भी जो अपने को सभ्य तथा विकसित मानता है, अपने से कमज़ोर जाति का किस प्रकार विनाश करता है, इसका उदाहरण सब कहीं मिलता है। विकसित प्रभु जाति ऐसा वातावरण तैयार करती है कि बदलती परिस्थितियों में उस कमज़ोर जाति के लोग ऐसी हीनभावना से ग्रसित हो जाते हैं कि वे अपनी भाषा, संस्कृति, परंपरा, रीति-रिवाज़, जीवन जीने का ढंग, अपने इतिहास इत्यादि को हीनभाव से देखने लगते हैं। फलस्वरूप उनके आत्मविश्वास, आत्मगौरव तथा स्वाभिमान टूटने लगते हैं और तब वे एक ऐसी स्थिति में पहुँचते हैं, जहाँ वे यह मान लेते हैं कि वे पिछड़े, कमज़ोर तथा बुद्धिहीन हैं, तब वे प्रभु वर्ग के लोगों से मिलकर अपने ही भाई-बंधुओं के पतन की दलाली आरंभ कर देते हैं। आज आदिवासी समाज पतन की इसी स्थिति में है क्योंकि आदिवासी समाज के स्वाभिमान को कानून, इतिहास, धर्म, साहित्य, कला तथा राजनीति के विभिन्न सामाजिक एवं राजनीतिक प्रभावों द्वारा इतनी बार कुचला और

रौंदा गया है कि वे अपनी उपस्थिति या अस्तित्व के मूल स्रोत को ही भूल बैठे हैं। वे कैसे कुचले जा रहे हैं, इसके दुष्परिणाम क्या हो सकते हैं, या हो रहे हैं, इन पर विस्तृत चर्चा आवश्यक है। आज भी आदिवासी तमाम मुद्दों पर परेशान है तथा अपनी बात को कहने की कोशिश कर रहा है कि उसे आज किस तरह लूटा तथा सामाजिक विषमता की ओर धकेला जा रहा है। आज लगातार पूँजीपतियों तथा सरकारों के विभिन्न विकासवादी कार्यक्रमों द्वारा आदिवासियों को सामाजिक तथा आर्थिक स्तर पर कमज़ोर किया जा रहा है। आर्थिक लूट एवं विषमता पर बात करते हुए अगर सर्वप्रथम भाषा पर बातचीत की जाए तो हम पाते हैं कि आदिवासी साहित्य का अमूल्य भंडार इन तमाम आदिवासी भाषाओं के लोकगीतों में उपस्थित हैं, जिनमें आदिवासी समाज की संघर्ष गाथा, इतिहास, विचार, भावनाएँ आदि सुरक्षित हैं। प्रत्येक समाज अपने साहित्य का विकास अपने स्तर से करता है। चूंकि आदिवासी समाज की कोई लिपि नहीं है इसलिए आदिवासियों का भाषा विकास उनके लोकगीत तथा लोक- कथाओं के माध्यम से होता जा रहा है।

आदिवासी कैसे आर्थिक लूट तथा विषमता के शिकार हो रहे हैं इसके तमाम उदाहरण हैं। आदिवासियों ने इस धरती को खेती करने लायक तथा नगर को बसने लायक बनाया। वे प्राचीनकाल से ही सभ्यता के विकास में लगातार अपने आत्मसम्मान को खोते जा रहे हैं। जब जंगल को साफ करने की बात आती है तो पूँजीवाद उनका अंधाधुंध इस्तेमाल करता है, परंतु जब उन्हीं जंगलों पर कब्जा करने की बात आती है तो पूँजीपति उनके सामाजिक उत्तरदायित्व को रौंदकर उसपर अपना विराट साम्राज्य स्थापित करने में चंद मिनट की भी देरी नहीं करता है। इस विषय पर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के पूर्व कमिशनर डॉ. ब्रह्मदेव शर्मा की एक महत्वपूर्ण बात याद आती है। उन्होंने एक सवाल उठाया-'आखिर क्यों अर्थशास्त्री एवं विद्वान एक खेतिहर मज़दूर को अकुशल मानते हैं? जब मज़दूरों की सूची बनायी जाती है तो उसमें उसे सबसे नीचे क्यों रखा जाता है? क्या खेतिहर मज़दूर की कोई कुशलता नहीं होती? खेतों में हल चलाने के लिए क्या किसी तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता नहीं होती? अगर ऐसा है तो कोई विद्वान चार कदम ही सही, ढंग से हल चलाकर दिखा दे।'[1]

इक्कीसवीं सदी की आदिवासी कविताएँ आदिवासी समाज के प्रतिरोध की भावना उस समाज पर लगातार हो रहे शोषण के प्रतिकार रूप में समाज के समक्ष प्रस्तुत होती हैं। जो समाज पुरातन काल से एक समृद्ध विरासत तथा उदात्त लोकजीवन को जी रहा था, आज मुख्यधारा के समाज के लालच तथा अतिक्रमण के रवैये के कारण लगातार असभ्य, मूर्ख, राक्षस तथा उदंड आदि नामों से पुकारा जाता है। कविताओं में भी इस प्रकार की आर्थिक लूट (जल, जंगल, जमीन की) करना, संस्कृति को लूटकर उसको ज़बरन हिंदू-ईसाई बनाए जाने का प्रयास करना तथा उनकी अस्मिता को खत्म करते जाना आदि भी मुख्यधारा की एक सोची-समझी रणनीति है। अपनी कविता 'विकास की धूल' में इसकी ओर संकेत करते हुए जसिंता लिखती हैं-'अब नहीं जाते कोई कदम/ खेतों की ओर वहाँ/ पैरों को लत पड़ चुकी है/ दौड़ पड़ने को कोयले लदे/ ट्रकों के पीछे, पैनम के रास्तों पर'[2]

इक्कीसवीं सदी की आदिवासी हिंदी कविता में निर्मला पुतुल सबसे व्यापक तथा जाना-माना नाम है। आदिवासी समाज किस प्रकार आज उपभोक्तावादी तथा बाज़ारवादी संस्कृति से प्रताड़ित हो रहा है, इसके तमाम उदाहरण इनकी तमाम कविताओं में मिलते हैं। निर्मला पुतुल, आदिवासी समाज की पुरखा संस्कृति की भी बात अपनी कविता के माध्यम से रखती हैं और बताती हैं कि आज विकास के नाम पर लगातार आदिवासियों की अस्मिता एवं अस्तित्व को सरकारें समाप्त करने पर तुली हैं। अपनी प्रसिद्ध कविता 'आखिर कब तक' में निर्मला पुतुल लिखती हैं-

'आखिर कब तक?/ कब तक हमारे हिस्से का समुद्र लीलकर/ बुझाते रहेंगे अपनी-अपनी प्यास/ और चढ़ाते रहेंगे निर्दोष मासूमों की बलि/ उनके हिस्से का अनाज छीनकर/ आखिर कब तक?'[3]

आदिवासियों की दशा सुधारने का जो सरकारी उपक्रम है, इसका फल केवल मंचों पर बड़े-बड़े भाषण देना तथा उनकी ज़मीनों को उच्च पूँजीपतियों को सौंपकर, उनका अनवरत आर्थिक तथा सामाजिक दोनों स्तरों पर शोषण करना ही होता है। आज भी तमाम संगोष्ठियाँ, कार्यशालाएँ इत्यादि आदिवासी समाज के उत्थान को लेकर लगातार आयोजित की जा रही हैं। लेकिन इस प्रकार के तमाम कार्यक्रमों में न तो एक भी आदिवासी समाज का प्रतिनिधि मौजूद रहता है और न ही उन पर कोई विशेष बातचीत की जाती है। सारा प्रक्रम केवल खानापूर्ति तक होकर समाप्त हो जाता है। इसका पूरा लाभ पूँजीपति वर्ग में कोरपोरेट घरानों के हिस्से जाता दिखलाई पड़ता है। इस विषय पर बेहद चिंतित आदिवासी विमर्शकार वीर भारत तलवार अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक 'झारखंड के आदिवासियों के बीच' में झारखंड की दशा को यूँ रेखांकित करते हैं- 'स्वर्णरेखा परियोजना से झारखंडी जनता को कोई लाभ नहीं होगा। इस परियोजना से सिंचाई का विकास होगा- यह बात सरासर झूठ है। असल में इस परियोजना का मूल उद्देश्य जमशेदपुर में पूँजीपतियों के कारखानों को पानी देना और हल्दिया, पाराद्वीप बंदरगाह तथा झारखंड की खनिज संपदा को पहुँचाना ही है। इसलिए यह परियोजना झारखंडी जनता का औपनिवेशिक शोषण करने के लिए बनी है।'[4]

दक्षिणपंथी लोग आदिवासियों को 'जंगली' तथा 'वनवासी', कहते हैं। उनको असभ्य और बर्बर साबित करने के लिए, लगभग उसी अंदाज़ में उपनिवेशवादी शक्तियाँ 'ट्राइब' या 'सेवेज' कहती हैं, ताकि उनके समाज और संस्कृति को पिछड़ा घोषित करके दक्षिणपंथियों को उन्हें 'सभ्य' बनाने का ठेका मिल जाए। बड़ी अजीब बात है कि आदिवासियों को वनवासी तो कहा जा रहा, लेकिन जंगल पर उनके अधिकारों की वकालत कोई नहीं करता। पिछले कुछ दशकों में हिंदुत्व की संरक्षक शक्तियाँ आदिवासियों की 'घर वापसी' के नाम पर उनका हिंदूकरण कर रही हैं। आदिवासियों को आदिम समय से एक स्थान विशेष पर उनकी उपस्थिति का बोध कराते हैं, क्योंकि यह बोध 'आदिवासी' घर में पूरी व्यापकता के साथ शामिल है।

आज़ादी के पचहत्तर वर्ष पश्चात भी आदिवासियों का कितना विकास हुआ, यह सोचने योग्य विषय है। आदिवासियों पर लगातार बढ़ते बाहरी अतिक्रमण के कारण आज भी भारत तथा विश्व के तमाम आदिवासी बहुल देशों में उनकी सामाजिक तथा आर्थिक दशा लगातार बदतर होती जा रही है। भारत के संदर्भ में अगर झारखंड राज्य के आदिवासियों की बात करें तो पाते हैं कि झारखंड की सभी बड़ी आदिवासी जनजातियाँ - संथाल, मुंडा, हो, खड़िया- पूरी तरह से कृषि में संलग्न जनजातियाँ हैं। इनकी खेतिहर ग्रामीण संस्कृति है। कुछ एक छोटी जातियाँ काफी पिछड़ी हुई हैं जो अभी तक आहार-संग्रह और घुमंतू हालत से आगे नहीं निकल सकी हैं, जैसे बिरहोर या खड़िया। आज़ादी के पहले आदिवासियों के सवाल पर हमारे राष्ट्रीय आंदोलन में कुछ नहीं सोचा गया। किसान समस्या पर, मज़दूरों के प्रश्न पर, स्त्रियों के सवाल पर और दलितों के सवाल पर भी सोचा गया, तमाम कार्यक्रम बनाए गए और तमाम आंदोलन भी चलाए गए। आज़ादी के पहले आदिवासियों के बीच जो भी अच्छा या बुरा काम हुआ, विदेशी पादरियों तथा इसाई मिशनरियों ने किया। इसके बाद दो तरह के लोग आदिवासियों के बीच गए- एक गाँधीवादी, दूसरे कम्युनिस्ट।

गाँधीवादी ऊँची जातियों की सवर्ण मानसिकता के साथ आदिवासियों को सुसंस्कृत बनाने की कोशिश में लगे रहे। दूसरी ओर कम्युनिस्टों ने आदिवासियों को एक क्रांतिकारी वर्ग के हिसाब से

देखा, जो उन लोगों द्वारा तय की गई नई जनवादी या राष्ट्रीय जनवादी क्रांति में अपनी भूमिका अदा करेंगे। गाँधीवादियों और कम्युनिस्टों ने आदिवासियों पर अपनी चेतना को थोपने और उन्हें अपने वैचारिक ढाँचे और कार्यक्रम में फिट करने की असफल कोशिश की। झारखंड के आदिवासियों तथा भारत के अन्य आदिवासियों को संगठित करने को बिरसा मुंडा ने 'उलगुलान' का नारा दिया, जिसका असर इतना व्यापक पड़ा कि न केवल झारखंड, बल्कि भारत के अन्य आदिवासी जनजाति बहुल राज्यों में भी आदिवासियों में अपनी विषमता को समाप्त करने तथा अपने अधिकारों को प्राप्त करने की जनचेतना जागृत होने लगी। अनुज लुगुन अपनी कविता 'चाय बागान की अंग्रेजी मशीन' में इन तमाम आंदोलनों पर प्रकाश डालते हुए लिखते हैं-'यह कोल विद्रोह के आसपास की बात थी/ यह हूल और उलगुलान के आसपास की बात थी/बातों-बातों में लोग फुसलाकर लाए गए थे/कुछ भागकर आए थे/जमीदारों की मार से ज्यादा ठीक लगती थी/चाय की हरियाली/उन्हें चाय से ज़्यादा पसंद थी हड़िया/उन्होंने अपनी देह गला दी/चाय के बागानों में'।[5]

आदिवासी समाज बहुत शांतिप्रिय और अपने में मग्न रहनेवाला है। वह कभी भी बेवजह किसी को परेशान नहीं करता, परंतु अगर कोई उसके क्षेत्र में बेवजह अतिक्रमण करता है तो वह उसके खिलाफ युद्ध भी छेड़ने में देरी नहीं करता। फिर जब आदिवासी अपनी अस्मिता और अधिकारों के लिए उठ खड़े होते हैं और तब अपना लाभ साधने को उन्हें माओवादी या नक्सली घोषित करके उनकी हत्या करवा देते हैं। अपनी अस्मिता की रक्षा को आदिवासी लगातार आंदोलन करते हैं। पहले यह देखना आवश्यक है कि माओवादियों के हमले के खिलाफ सैनिक ताकत से राज्य की हिफाज़त का ऐलान करनेवालों ने भारतीय राज्य की क्या स्थिति बनाकर रखी है? उन्होंने भारतीय राज्य को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उदारवादी वैश्विक संस्थाओं का गुलाम और राष्ट्रीय स्तर पर स्वार्थी गिरोहों का अड्डा बना दिया है। राज्य, शासक वर्ग को इसलिए चाहिए कि उसमें उनकी बेईमानी, झूठ, दलाली, पाखंड, अंधविश्वास और नंगापन खुलकर चलते हैं। सांप्रदायिकता, जातिवाद, वंशवाद, परिवारवाद, क्षेत्रवाद, धनबल और बाहुबल की राजनीति चलती है। देश के संसाधन दलाली खाकर देशी-विदेशी बहुराष्ट्रीय कंपनियों को बेचे जाते हैं। संविधान विरोधी कानून बनाए जाते हैं और आवाज़ उठानेवाले नागरिक समाज को बातचीत में देशद्रोही घोषित कर दिया जाता है। ये सब मनुष्य, समाज और राष्ट्र विरोधी घृणित कर्म करने के बावजूद वे ठाट से भारी राष्ट्रवादी होने का चोला पहनते हैं। अपनी कविता 'मेरी वफादारी तुम्हारे लिए नहीं है' में अनुज लुगुन इस बात को पुष्ट करते हुए दिखलाई पड़ते हैं-' मैं उन जातियों का रेला देख रहा हूं/जिनके पन्नों को संविधान से नोंचकर फेंक दिया जा रहा है/और तुम मुझसे कहते हो/सावधान की मुद्रा में/विनम्रता साबित करने के लिए'[6]

इक्कीसवीं सदी की आदिवासी हिंदी कविता प्रेम एवं सहभागिता को लेकर चलती है। आदिवासी समाज लगातार उपभोक्तावादी संस्कृति के विरुद्ध अपनी सहजीविता तथा स्वायत्तता को बचाए रखने को तथा अपनी संस्कृति की रक्षा को लेकर हमेशा तत्पर रहता है। आदिवासियों के संसाधनों की लूट को लेकर अरुंधति राय ने दंडकारण्य में माओवादियों के साथ अपने अनुभव पर एक लेख 'आउटलुक' पत्रिका में प्रकाशित करवाया।

वैश्विक स्तर पर विचारधाराओं, पार्टियों और नेताओं से परामर्श लेने में कोई बुराई नहीं मानी जानी चाहिए। लेकिन हिंदुस्तानी समाज को प्रदत्त फार्मूलों के बजाय उसी की विशेषताओं और शर्तों को समझना अति आवश्यक है। इन तमाम बातों को महादेव टोप्पो अपनी कविता 'तुम आए हमारे पास' में इस प्रकार लिखते हैं-'जिनके होते हैं लेख प्रकाशित/राष्ट्रीय अंतर्राष्ट्रीय जर्नलों में/और इन्हीं विषयों पर देने व्याख्यान/घूमते रहते हो देशी-विदेशी विश्वविद्यालय/या कभी औषधि विज्ञान संस्थाओं

में/हम तलाशते तुम्हारे द्वारा बनाई दवाइयों को बाजारों में/दुकानदार तुम्हारी दवाइयां मांगने पर/हमेशा करता है इनकार'[7]

आज भारत के तमाम राज्यों में आदिवासियों का शोषण अनवरत चल रहा है। आज भी आदिवासी इलाकों में देखेंगे तो कोने-कोने, पहाड़ों पर आदिवासियों को मूर्ख बनाते और ठगते मिल जाएंगे। उनके संसाधनों के माध्यम से अपनी रोज़ी-रोटी चलाते हैं। उनके मुर्गे, बकरियां तथा फसलें जो भी पैदा होती हैं, लूटे जाते हैं। जो भी प्राकृतिक संसाधन आदिवासियों के पास होते हैं उनको यह ज़बरदस्ती हथिया लेते हैं। इस प्रकार, इन तमाम तथाकथित समाज सुधार आंदोलनों की एक विस्तृत श्रृंखला लगातार चलती रहती है।

भागीरथ माझी के पश्चात उसी आंदोलन का एक दूसरा बड़ा नेता हुआ, दुबिया गोसाई जो आदिवासी नहीं था। संथाल जनजाति खूब लूटी गयी और उनका जबरन उपभोग भी किया गया। इस तरह तमाम मुख्यधारा के लोग अलग-अलग रूपों में उनकी ज़मीनों को, संसाधनों को हड़पा, मगर संथाल आंदोलन के बाद 'संथाल परगना टेनेक्सी एक्ट' बन गया। उसके तहत यह प्रावधान किया गया कि संथालों की ज़मीन को कोई गैर-संथाल नहीं खरीद सकता। इसके बावजूद आज भी तमाम तरीकों से आदिवासियों का सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक शोषण लगातार ज़ारी है और इन शोषणों को रेखांकित करते हुए रमणिका गुप्ता लिखती हैं- 'साहित्य, संस्कृति, धर्म, परंपरा, इतिहास, समाज किसी भी क्षेत्र से संबंधित आदिवासी अभिव्यक्ति का सवाल हो, नेतृत्व स्वयं आदिवासियों को अपने हाथ में लेना पड़ेगा और अन्य लोग कंधे से कंधा मिलाकर उनके साथ चलेंगे तभी आदिवासियों के शोषण को रोका जा सकता है।'[8]

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. टोप्पो महादेव, सभ्यों के बीच आदिवासी, अनुज्ञा बुक्स, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2018, प्रथम पुनर्मुद्रण 2020, पृष्ठ 31
2. केरकेट्टा जसिंता, अंगोर, आदिवाणी प्रकाशन, कोलकाता, प्रथम संस्करण 2016, पुनर्मुद्रण 2019, पृष्ठ 82
3. पुतुल निर्मला, बेघर सपने, आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा), प्रथम संस्करण 2014, पृष्ठ 67
4. तलवार वीर भारत, झारखंड के आदिवासियों के बीच, भारतीय ज्ञानपीठ, प्रथम संस्करण 2008, द्वितीय संस्करण 2012, पृष्ठ 129
5. लुगुन अनुज, पत्थलगड़ी, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2021, द्वितीय संस्करण 2022, पृष्ठ 85
6. लुगुन अनुज, पत्थलगड़ी, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2021, द्वितीय संस्करण 2022, पृष्ठ 32
7. टोप्पो महादेव, जंगल पहाड़ के पाठ, अनुज्ञा बुक्स, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2017, प्रथम पुनर्मुद्रण 2021, पृष्ठ 65
8. गुप्ता रमणिका, भारत का आदिवासी स्वर, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2018, पृष्ठ 93

◆शोधार्थी

हिन्दी एवं आधुनिक भारतीय भाषा विभाग

इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज,उत्तर प्रदेश,

मो.- 9044657081

ई-मेल- vedprakashsingh034@gmail.com

लेड़ीज़ क्लब: भारतीय स्त्री जीवन का आईना

◆मिन्नु जोसेफ

शोध सार – 'लेड़ीज़ क्लब' मानव जीवन के विभिन्न पक्षों को व्याख्यायित करनेवाला बहुआयामी उपन्यास है। उपन्यास एक तरफ़ स्त्री-पुरुष, हिन्दू, मुस्लीम तथा दलित को वर्ग विशेष से उठाकर इनसान के दर्जे में प्रतिष्ठित करता है तो दूसरी तरफ़ यह कृति पक्ष-विपक्ष के झगड़े से दूर सामाजिक जीवन के यथार्थ का चित्रण है। प्रस्तुत शोध आलेख में 'लेड़ीज़ क्लब'उपन्यास के स्त्री पात्रों के द्वारा भारातीय स्त्री जीवन के विभिन्न परिदृश्यों का अध्ययन किया गया है।

बीज शब्द– स्त्री जीवन, विश्वविद्यालय, संस्कृति,स्त्री स्वतंत्रता, पितृसत्ता, भारतीय समाज।

अलीगढ़ विश्वविद्यालय के परिदृश्य में यूनिवेर्सिटी कैंपस से जुड़ा एक 'लेड़ीज़ क्लब' उपन्यास का केंद्र बिन्दु है। लेड़ीज़ क्लब के हरेक सदस्य की कहानी के द्वारा उपन्यास आगे बढ़ता है। उपन्यास में सडसठ स्त्री पात्र हैं। कुल पात्रों की संख्या नब्बे के आस-पास हैं। यदि उपन्यास के केन्द्रीय पात्र के बारे में बात करें तो ऐसा कोई भी पात्र नहीं है, जिसे पाठक नायक या नायिका की उपाधि दे सकें। प्रत्येक पात्र अपनी-अपनी समस्याओं के द्वारा उपन्यास के केन्द्र में है। 'लेड़ीज़ क्लब' उपन्यास का प्राण है।अलग-अलग शीर्षकों के द्वारा ग्यारह अध्यायों में विभक्त उपन्यास के सारे पात्र अलीगढ़ विश्वविद्यालय से किसी न किसी रूप से जुड़े हैं। कुछ लोग वहाँ की प्राध्यापिकाएँ या प्राध्यापक हैं, कुछ लोग इसके आसपास रहनेवाले हैं तो कुछ लोग इनके घरों में काम करनेवाली नौकरानियाँ या नौकर हैं। अलीगढ़ तथा वहाँ के दोनों विश्वविद्यालयों से लेखिका का अटूट सम्बन्ध रहा है। यह उपन्यास के लिए एक सशक्त पृष्ठभूमि तैयार करने में बहुत ही लाभदायक सिद्ध हुआहै।

'लेड़ीज़ क्लब' ने सांप्रदयिकता और स्त्री जीवन को भारतीय परिदृश्य में मुख्य मुद्दे के रूप में चित्रित किया है। लेड़ीज़ क्लब के माध्यम से देश के अल्पसंख्यकों की समस्या पर बारीकी से विश्लेषण करते हुए भारत की जाति-दर-जाति की सैकड़ों संकीर्णताओं तथा समाज के विभाजन की जटिलताओं को, साम्प्रदायिक परिवेशों को विभिन्न तबके की स्त्रीयों के ज़रिए, उनके जीवन की हालतों के ज़रिए उतारा गया है। उपन्यास में जनाना पार्क से लेड़ीज़ क्लब तक और मधुबन से लेकर गोरखपुर तक ग्यारह अध्याय हैं। जनाना पार्क ऐतिहासिक झंडेवाला पार्क है। "आज़ादी का प्रतीक बन चुका तीन रंगोंवाला हिन्दुस्थानी झंडा जिसे धारण किया था इस पार्क ने। 1857 में हुए क्रांति का भारतीय जन मानस की एकता का प्रतीक।"[1] इसके बाद राष्ट्र के लोग वर्ण, वर्ग,धर्म, जाति तथा नस्ल के नाम पर परस्पर लड़ने लगे। गोरखपुर तो उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में नेपाल के साथ सीमा के पास स्थित भारत का एक प्रसिद्ध धार्मिक शहर है। वह बौद्ध, हिन्दू, मुस्लिम, जैन और सिक्ख सन्तों का साधना स्थल रहा है। इस प्रकार गोरखपुर भारत की एकता का जीवंत प्रतीक है। जिस एकता के साथ हम सन् 1857 का प्रथम स्वतंत्रता-संग्राम लड़े थे उसी एकता को वापस लाने का परोक्ष आग्रह उपन्यास के अन्त में दिखाई पड़ता है।

अतीत के पन्नों को बड़े आहिस्ते से खोलते हुए लेखिका ने विभिन्न तबके के स्त्री जीवन की हालतों को रिपोर्ताज शैली में उभारा है। सालों से स्त्री-स्वतंत्रता के नारे उठ रहे हैं, लेकिन आज भी यह एक प्रासंगिक सवाल है कि स्त्री-स्वतंत्रता की सीमा निर्धारण करनेवाला कौन है? उपन्यास को पढ़ते हुए हर एक स्त्री पाठक के मन में यह सवाल पैदा होता है। पारिवारिक संरचना की जटिलताओं में पड़कर मुक्ति की कामना करनेवाली स्त्रियों, पति के अधीन गृहस्थ जीवन बितानेवाली नारियों, कामकाजी स्त्रियों की घर-बाहर की ज़िन्दगी और धार्मिक व्यवस्था तथा

सांप्रदायिकता की भीषण स्थितियों का चित्रण उपन्यास में है। नारी जीवन की जटिलताओं तथा संकीर्णताओं के व्यापक चित्रण के साथ-साथ समाज द्वारा निर्मित सीमाओं को चुनौती देनेवाली शहनाज़ आपा और ज़हरा रिज़वी जैसी क्रांतिकारी स्त्रियों का भी चित्रण उपन्यास में है।

स्त्री और पुरुष के सहअस्तित्व से ही पारिवारिक संरचना में पूर्णता संभव है। पितृसत्तात्मक समाज में पुरुषों का अधिकारबोध स्त्रियों को गुलाम बना देता है।उपन्यास में राधा कथावाचिका है जो अलीगढ़ विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका है। पति अतुल भी वहाँ प्राध्यापक है। दोनों घर के बाहर एक ही तरह काम करते हैं, फिर भी राधा को घर-बाहर की दोहरी ज़िम्मेदारी निभानी पड़ती है। सुबह आठ बजे भारतीय गृहिणियों के लिए रसोई के साथ द्वंद्व का समय है। नौकरी के लिए जाने से पहले उसे घर के कामों में मशीन की तरह जुड़ा रहना पड़ता है, जैसे- पति अतुल के दैनिक क्रम में एक के बाद एक फरमाइशों को पूरा करना।

उपन्यास में 'स्ट्रीम आफ कांशसनैस' के ज़रिए राधा जैसी अन्य कुछ और महिला पात्रों का भी चित्रण हुआ है।राधा कभी-कभी सबेरे आठ बजे के समय 'सुल्ताना का सपना' देखने लगती है, जब कि भारतीय स्त्रियों के लिए सबेरे के आठ बजे सपना देखना आसान काम नहीं है। सपना इस प्रकार है "घर के बाहर बड़ा सा लॉन खूब हरा-भरा। मखमली घास! रंग-बिरंगे फूल। लंबा-चौड़ा बरामदा। पृष्ठभूमि में संगीत। नहीं, बिस्मिल्ला खां की शहनाई। मैं आरामकुर्सी में अधलेटी। हाथ में अखबार या कोई उपन्यास! या कुछ और नया। तिपाई पर रखा चाय या कॉफी। प्याला खाली होता है, दस मिनट बाद कोई आकर दूसरा प्याला रख गया।"[2] चाहे गृहस्थ स्त्री हो या कामकाजी स्त्री यह सपना कतई संभव नहीं हो सकता, जब कि पुरुष के लिए यह एक सपना नहीं,बल्कि उसकी दिनचर्या है। इस प्रकार लेखिका पारिवारिक संरचना में होनेवाले भेदभाव को छोटी-छोटी घटनाओं के माध्यम से पाठक के सामने रखकर उन्हें सवालों के कटघरे में खड़ा करती हैं।

स्त्री आन्दोलन का आरम्भ ही स्त्री-स्वतंत्रता के प्रश्न को लेकर उठ खड़ा हुआ था। लेखिका के अनुसार लखनऊ का ऐतिहासिक झंडेवाला पार्क स्त्री-स्वतंत्रता का प्रतीक है, जहाँ तकरीबन अड़तीस-चालीस साल पहले राधा सहित अनेक औरतों ने महंगाई और बेरोज़गारी के खिलाफ बहुत बड़ी सभा की थी। "ऑल इंड़िया विमेन फेड़रेशन ने मीटिंग कराई थी। एक साथ इतनी बड़ी औरतों का हुजूम। मैं तो बिलकुल नई थी ऐसे सामाजिक कामों में। पर्दानशीन, बेपर्दा, जवान, बूढ़ी, माँगभरी, बगैर मांगवाली, उखड़ी-धकड़ी औरतें, हाथ उठा-उठाकर नारे लगाती औरतें। देखकर पूरा शरीर रोमांचित हो उठा। एक महीने की मेहनत का फल था यह।"[3] अब जनाना पार्क की हरियाली और भव्यता कांक्रीट जंगल में परिणत हो गई है। पहले स्त्रियाँ इकट्ठा होती थीं अपनी सामाजिक उन्नती और जागरण के लिए। लेकिन "अब महिलाएँ इकट्ठा होती हैं सिर्फ देवी जागरण के लिए, रामकथा-विष्णु कथा, सिर्फ कथाओं के लिए।... गरीबी, बेकारी जैसे मुद्दों पर बात करना अब आउट ऑफ फैशन है। यह हाईटेक का ज़माना है। ग्लोबल मार्केट का ज़माना है।"[4] उपनिवेश संस्कृति और भूमण्डलीकरण ने स्त्री को अपने स्वत्व और आत्मा से दूर कर दिया है,ताकि वह हाईटेक के ज़माने में बिना कुछ कहे गूँगी, बहरी बनी रहे।

शहनाज़ आपा लेड़ीज़ क्लब में सबसे सीनियर हैं, यानि वे लेड़ीज़ क्लब बनानेवालों में एक हैं। वे एक रिटायर्ड प्रोफसर हैं। शहनाज़ आपा एक क्रांतिकारी महिला है। लंबे समय तक वे यूनिवर्सिटी के ड्रामा क्लब की इंचार्ज रही थीं। 80 और 82 के दंगे के बाद लड़कियों पर अनेक फतवें पड़े। इन फतवों के अनुसार लड़कियाँ ड्रामा में भाग नहीं ले सकतीं। शहनाज़ आपा बहादुर थी। केवल लड़कियों पर ऐसे फतवों को सहन नहीं कर पाई- "ये युनिवर्सिटी है, मदरसा नहीं। यहाँ शिक्षक समुदाय है, जमात नहीं। यहाँ ज्ञान बाँटा जाता है, जहालत नहीं।"[5] समाज में

किसी भी प्रकार के दंगे पैदा हो जाएँ, फतवे केवल स्त्रियों पर पड़तेहैं।यही हमारी सामाजिक व्यवस्था है। जो भी औरत इस व्यवस्था के खिलाफ आवाज़ उठाती है उसे समाज गंदी और हीन दृष्टि से देखता है तथा उसे वेश्या की उपाधि सौंप देती है। शहनाज़ आपा कभी भी इन उपाधियों से पीछे नहीं लौटी। वह तन-मन से लड़कियों का हौसला बढ़ाती रही। "आज लड़कियाँ स्टेज पर नहीं गाएँगी। ड्रामा क्लब में नहीं आएँगी। लड़कियाँ स्कूटर नहीं चलाएँगी। लड़कियाँ कपड़े हमारी मर्जी के पहनेंगी। कोई अंत है इन फतवों का? इससे बेहतर होगा कि लड़कियाँ पढ़ने नहीं आएँगी और पढ़ने क्यों, दुनिया में भी नहीं आएँगी।"[6] लड़कियों पर जमात द्वारा लगानेवाले इन फतवों से शहनाज़ आपा ने कभी समझौता नहीं किया। इस लड़ाई में ज़हरा रिज़वी गले-गले तक उनके साथ थी।ज़हरा अक्सर कट्टरपंथी ग्रूप के विरोध का शिकार बनी रहती थी। उनके रहन-सहन, जीवन शैली, सिगरेट पीना, शराब की महफिलों में शामिल होना आदि किसी को भी नहीं भाते थे। शहनाज़ आपा और ज़हरा रिज़वी बिलकुल स्वतंत्र जीवन बितनेवाली औरतें हैं। उपन्यास में विमलेश, साजिदा नकवी और अनवरजहाँ भी स्वतंत्र जीवन बितानेवाली औरतें हैं। स्वतंत्र जीवन का अर्थ परिवार या ज़िम्मेदारियों से अलग जीवन से नहीं, बल्कि अपनी स्वतंत्र अस्मिता तथा स्वत्वबोध के साथ जीने से है।

पारिवारिक संरचना की जटिलताओं के बीच दम घुटने पर कभी-कभी राधा अपनी जवानी की यादों में स्वतंत्रता महसूस करती है। "जवानी के दिन याद आ गए और हम लोग कॉलेज से फिल्म देखने चले गए। कई पुरानी यादें ताज़ा हुईं। घर-गृहस्थी और नौकरी, पति-बच्चे, रिश्तेदारियाँ, काम का बोझ। हमारे मध्यवर्गीय समाज में ज़िन्दगी घड़ी की टिक-टिक पर टिकी मशीन बनकर रह जाती है। ऐसे में सब बंधन छोड़कर किसी दिन रोज़ की दिनचर्या की ज़िम्मेदरियाँ भूलकर ऐसे ही गब्बर सिंह को देखने बीहड़ में निकल जाओ या मुगलिया सल्तनता के शाहंशाह के दरबार में पहुँच जाओ तो कितनी ताज़गी महसूस होती है।"[7] राधा अपनी ज़िंदगी और पारिवारिक ज़िम्मेदारियों से इतनी ऊब गई है कि वह घर-बार छोड़कर भाग जाना चाहती है। असल में बहुमत भारतीय स्त्रियाँ केवल स्त्री होने के कारण उस पर पड़ी ज़िम्मेदारियों से दूर भागना चाहती हैं।

कभी-कभी बेरोज़गारी या असहायता के कारण स्त्री को पति के अधीन रहना पड़ता है। इस तरह से जीने से वह अपने सपनों और इच्छाओं को पति के हवाले करती है। समाज में उसका अपना स्वतंत्र अस्तित्व नहीं है। इतना ही नहीं, अपनी छोटी-छोटी आवश्यकताओं के लिए पति के सामने हाथ फैलाना पड़ता है। उपन्यास में लीला गुप्ता, सल्मा और शशिबाला इस प्रकार की नारियाँ हैं। लीला गुप्ता विश्वविद्यालय कैंपस में पति के साथ रहती थी। उसका पति डॉक्टर है और बेहद कंजूस भी। लीला गुप्ता गृहिणी है, इसलिए उसे एक-एक पैसे का हिसाब पति को दिखाना पड़ता था। एक दिन पति उसे पाँच सौ रुपये की साड़ी खरीदने की अनुमति दी। लेकिन उसने पाँच सौ साठ की साड़ी खरीद ली। इस बात पर घर में हंगामा मचा। दूसरे ही दिन लीला ने साड़ी शहीदा को बेच दी।इस घटना से लीला यह समझ गई कि नौकरी पेशा स्त्रियों से उसका अंतर यह है कि एक स्त्री की नौकरी उसका हुनर और स्वत्वबोध का द्योतक है, क्योंकि वह स्वावलम्बी है। इसलिए शहीदा की मदद से पी.एच.डी करके लीला ने यूनेवेर्सिटी में नौकरी पा ली।शशिबाला उपन्यास में राजनीति से जुड़ी स्त्री है। वह एकदम घरेलू महिला थी, लेकिन मेयर का पद महिलाओं के लिए आरक्षित करने के कारण पति रामशरण अग्रवाल ने शशिबाला को उम्मीद्वार बनाया। शशिबाला केवल नाम के लिए मेयर है,मेयर कुर्सी पर शशिबाला बैठती है, लेकिन मुख्य राजनीतिक फैसले रामशरण अग्रवाल द्वारा ही लिया जाता है। शिक्षा और अस्मिताबोध के अभाव के कारण शशिबाला की दृष्टि एकदम परंपरावादी है। शशिबाला उन स्त्रियों में है जो वैवाहिक जीवन में गुलामी और सहनशीलता को स्त्री का सबसे बड़ा गुण मानती है।'विमेन्स डे' के मुख्य भाषण में शशिबाला

का भाषण इस प्रकार है "महिलाओं के आगे बढ़ने का मतलब ये नहीं कि हम लोग घर-परिवार को भूल जाएँ। हमारे हिन्दू धर्म और संस्कृति में पति परमेश्वर होता है। पति की आज्ञा और आशिर्वाद से ही हम आगे बढ़ सकते हैं। हमारे आदर्श सीता और सावित्री हैं।"[8] यह सुनकर राधा यह संदेह प्रकट करती है कि एक सामान्य भारतीय स्त्री के लिए सीता और सावित्री का आदर्श कहाँ तक संभव है। उसके अनुसार आज के समय में किसी स्त्री पर लांछन लगाया जाए तो सीता जैसी सहनशील नहीं होनी चाहिए बल्कि तुरंत एफ.आई.आर दर्ज करना होगा। राधा के अनुसार आज स्त्री को सहनशीलता का आदर्श नहीं, बल्कि प्रतिरोध का आदर्श स्वीकारना चाहिए।

भारतीय धर्मशास्त्रों में कहीं भी विधवाओं के लिए पाबन्दी नहीं है, लेकिन लोगों का यह मानना है कि विधवा स्त्री के लिए अच्छा खाना, वस्त्र और मंगल कार्य में उपस्थिति आदि निषिद्ध है। निषिद्ध शब्द केवल स्त्रियों के साथ जुड़ा है, पुरुषों के साथ नहीं। उपन्यास के एक संदर्भ में राधा अपनी विधवा ताई के बारे में कहती है कि उन्हें केवल रंग-बिरंगे कपड़े ही नहीं, बल्कि रंग-बिरंगी तरकारियाँ तथा फल भी निषिद्ध थे।समाज में पुरुषों के लिए किसी भी तरह का प्रतिबंध नहीं है।केवल विधवाओं के लिए प्रतिबंध है, विधुर के लिए नहीं। "हालाँकि यह प्रतिबंध पुरुषों की जमात के लिए नहीं था। औरतों को ओढ़ाई जानेवाली ये खास चादरें थीं। खाने-पीने का निषेध औरतों के लिए ही रहता था। मर्द का छुटपन सहज स्वीकार्य है, चाहे धार्मिकता के मसले हों या सामाजिक नियमों के। ... भोजन और खान-पान की हमारी परंपरा बड़ी सूझबूझ के साथ बनाई गई है; स्त्री भोजन और पुरुष भोजन दो अलग दुनिया के वासी। दो अलग सूचियाँ।"[9] भारतीय समाज आज भी पितृसत्तात्मकता के सिद्धांतों पर आधारित है। इसलिए स्त्री और पुरुष को कभी समान दर्जा नहीं प्राप्त हुआ।

'धर्म' का अर्थ है 'जो सबको धारण करनेवाला'। धर्म की बनी-बनाई जटिलताएँ स्त्री को धारण करने योग्य नहीं हैं। धर्म की अन्तहीन जटिलताओं एवं जंजीरों के अन्दर स्त्री जीवन हमेशा प्रताड़ित है। धर्म की जटिलताएँ हमेशा स्त्री को हाशिए पर रख देती हैं। धर्म और साम्प्रदायिकता की आग में तड़पनेवाली स्त्रियों का चित्रण उपन्यास में है। फतवे स्त्रियों को समाज से दूर घर की चार दीवारों के बीच धकेल देते हैं। सांप्रदायिकता के साथ स्त्रियों का दूर-दूर तक कोई सम्बन्ध नहीं है। फिर भी सांप्रदायिकता की आग में सबसे ज़्यादा स्त्रियाँ ही दब जाती हैं।धर्म के नाम पर पुरुष स्त्री पर कितना भी अत्याचार करे समाज उसे दोषी नहीं ठहराएगा। पति कितना भी प्रगतिवादी क्यों न हो धर्म का विषय सामने आने पर वह पत्नी को बुरके के भीतर धकेल देता है। मेराज और कुल्सुम ने प्रेम विवाह किया था। शादी से पहले कुल्सुम एक मॉर्डन लड़की थी। नब्बे प्रतिशत घटनाओं में भी पारिवारिक मान-मर्यादाओं को ध्यान में रखकर स्त्रियाँ अपने आपको समेट कर रखती हैं। फिर भी वह हिम्मत के साथ ऐलान करती है कि 'मैं पर्दा नहीं कर सकती'। लेकिन समय के साथ वह भी बुरके के अन्दर सीमित हो जाती है।

स्त्री चाहे कितना भी बड़ा कार्य करे, पितृसत्तात्मक समाज के लिए वह मूर्ख और अबला है। स्त्रियों की सामाजिक भागीदारी पुरुषों के लिए असहनीय है। इसी ईर्ष्या के कारण वे स्त्रियों को मूर्ख चित्रित करके अपने आपको गम्भीर बनाने की कोशिश करते रहते हैं। स्त्री चाहे किसी भी वर्ग की हो, किसी भी जाति की हो, समाज के सामने केवल भोग करने योग्य शरीर मात्र है। उसकी कोई जाति नहीं, वर्ग नहीं, धर्म नहीं। वह केवल स्त्री है। इस प्रकार नमिता जी ने उपन्यास में स्त्री जीवन के यथार्थ का जीता-जागता चित्र पूरी विश्वसनीयता के साथ पेश किया है। भारतीय समाज की स्त्रियों की चीख सदा अनसुनी रह जाती है। सदियों से अनसुनी इस आवाज़ का शब्दबद्ध रूप है यह उपन्यास।

संदर्भ

1. नमिता सिंह, लेड़ीज़ क्लब, सामयिक प्रकाशन,

पहला संस्करण-2017, पृ.19
2. वही, पृ.09
3. वही, पृ.19
4. वही, पृ.20
5. वही, पृ.23
6. वही, पृ.24
7. वही, पृ.126
8. वही, पृ.106
9. वही, पृ.149

◆शोधार्थी,
हिन्दी विभाग
कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय
कोच्ची-22, केरल।
ई-मेल-minnuj96@gmail.com
मो नं-7356585177

हिंदी भाषा और सूचना प्रौद्योगिकी

◆ **डॉ. लक्ष्मी एस. एस**

सार : सूचना विस्फोट आज के मनुष्य की प्रगतिवादी विचारधारा का ही एक रूप है। सूचना प्रौद्योगिकी एक सरल तंत्र है जो तकनीकी उपकरणों के सहारे सूचनाओं का संकलन, प्रक्रिया एवं सम्प्रेषण करता है। कंप्यूटर और सूचना टेक्नॉलॉजी के क्षेत्र में आज जो नया विस्फोट हुआ है वह भाषा में भी एक मौन क्रांति का वाहक बनकर आया है। हिन्दी एक सशक्त भाषा है। सदियों से भारत जैसे बहुभाषी देश की सबसे बड़ी संपर्क भाषा होने के साथ-साथ, आज यह विश्व की तीन सबसे बड़ी भाषाओं में से एक है। आज टेक्नॉलॉजी की भाषा को आम आदमी के नज़दीक पहुँचाने की आवश्यकता बढ़ गयी है। मुक्त बाज़ार और वैश्वीकरण के दबावों ने हिन्दी को ज़रूरत और माँग के अनुकूल ढालने में भूमिका निभाई है। विश्व में अब उसी भाषा को प्रधानता मिलेगी जो व्याकरण संगत होगी, जिसकी लिपि कम्प्यूटर की लिपि होगी। चूँकि हिन्दी भाषा का व्याकरण वैज्ञानिक आधार पर बना है, इसलिए देवनागरी लिपि कम्प्यूटर यंत्र की प्रक्रिया के अनुकूल है। इसमें विश्व की किसी भी भाषा एवं ध्वनि का लिप्यांकन किया जा सकता है। कम्प्यूटर में हिन्दी की बढ़ती संभावनाओं को ध्यान में रखकर इलेक्ट्रोनिक विभाग ने भारतीय भाषाओं के लिए टेक्नॉलजी विकास नामक परियोजनाओं के अंतर्गत कई प्रोजेक्ट शुरू किए हैं। इस प्रयास में आई॰ आई॰ टी कानपुर और सी – डैक की भूमिका प्रमुख थी। यूनिकोड इस दिशा में एक बड़ी क्रांति है। विंडोज़ प्लेटफ़ॉर्म में काम करनेवाले अनेक हिन्दी सॉफ़्टवेयर मार्केट में उपलब्ध हैं, जैसे, सी – डैक का ISM ऑफिस, अक्षर फॉर विंडोज, हिन्दी में स्क्रीन का समस्त परिवेश जैसे कमान, संदेश, फ़ाइल नाम आदि भी हिन्दी में उपलब्ध हैं।आज कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करना बहुत आसान हो गया है और भविष्य में इसका रूप और सरल होता जाएगा। संचार के माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग कोई नयी बात नहीं है। सूचना प्रौद्योगिकी के अनेक स्तर जैसे टेलीविज़न, दूरदर्शन, कंप्यूटर, इंटरनेट, मोबाइल, सोशल मीडिया आदि में हिंदी का प्रयोग और अधिक बढ़ गया। आशा है कि सूचना प्रौद्योगिकी के युग में हिंदी भाषा और भी नई प्रौद्योगिकी से आगे बढ़ेगी।

बीज शब्द : सूचना प्रौद्योगिकी, हिंदी भाषा का प्रचार, कंप्यूटर का हिंदीकरण, हिंदी सॉफ्टवेयर, सोशल मीडिया और हिंदी, संचार माध्यमों में हिंदी

सूचना विस्फोट आज के मनुष्य की प्रगतिवादी विचारधारा का ही एक रूप है। मनुष्य का स्वभाव ही कुछ ऐसा है कि वह हमेशा नया कुछ खोजने में और नया जानने में प्रयत्नशील रहता है। आज का मानव नए रहस्यों को उजागर करने में लगा रहता है और वह पुराने तथ्यों को अपनी कसौटी पर खरा देखना चाहता है। इस सूचना भण्डार को इकट्ठा करने के लिए आधुनिक तकनीक का उपयोग आवश्यक

है, क्योंकि पारंपरिक साधन और विधियाँ सूचना के क्षेत्र में आई बाढ़ को नियंत्रित करने में सक्षम नहीं हैं और उसमें समय भी बहुत अधिक लगता है।

सूचना तकनीक का मतलब कम्प्यूटर और संचार तकनीकी विधियों का समन्वय है, जिसका उपयोग सूचना एकत्रीकरण, व्यवस्थीकरण और प्रसारण के लिए किया जाता है।

उदारीकरण और भूमंडलीकरण के इस प्रचलित दौर में त्वरित जानकारी के लिए सूचना महामार्ग पर आने को गतिशील करने की अनिवार्यता और सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक प्रगति के शिखर पर पहुँचने की आवश्यकता है। सूचना तकनीक के क्षेत्र में हुई अभूतपूर्व क्रान्ति हमें चौंकाती तो है ही, हतप्रभ भी करती है। यह नई दुनिया लगातार सिमटती जा रही है। मार्शल मैक्लुहान [1] इसे 'ग्लोबल विलेज' कहते हैं, तो तकनीकी विशेषज्ञ इसे 'कंप्यूटर नेटवर्क की दुनिया' कहते हैं।

सूचना पश्चिम से आयी है। सूचना प्रौद्योगिकी एक ऐसा अनुशासन है, जिसमें सूचना का संचार अथवा आदान-प्रदान त्वरित गति से, दूरस्थ सभाओं में, विभिन्न तरह के संसाधनों के माध्यम से सफलतापूर्वक किया जाता है। सूचना प्रौद्योगिकी (Information Technology) के दो महत्वपूर्ण घटक हैं- सूचना और प्रौद्योगिकी। 'सूचना' अंग्रेजी के information शब्द का हिंदी रूपांतर है। 'प्रौद्योगिकी' अँग्रेजी का बहुप्रचलित शब्द Technology का हिन्दी रूपांतर है। Encyclopedia Americana के अनुसार Technology refers to the ways of making or doing things', अर्थात् 'प्रौद्योगिकी' शब्द अपने संकुचित अर्थ केवल प्रौद्योगिकी प्रक्रियाओं से सम्बन्धित है, जिसने हस्तकला और शिल्प को विस्थापित किया है, जबकि व्यापक अर्थ में यह शब्द सभी पदार्थों के साथ होनेवाली सभी प्रक्रियाओं का द्योतक है। वास्तव में प्रौद्योगिकी का ज्ञान व्यावहारिक ज्ञान है, जिसे अर्जित करना पड़ता है। दूसरे शब्दों में कहें तो, अर्जित किए गए विशिष्ट सैद्धान्तिक ज्ञान को व्यावहारिक ज्ञान में परिणत करना होता है। अतः 'In its broader sense, technology may be defined as application of knowledge',[2] इस प्रकार प्रौद्योगिकी, ज्ञान की ऐसी शाखा है, जिसका सरोकार यान्त्रिकी कला अथवा प्रयोजनपरक विज्ञान अथवा इन दोनों के समन्वित रूप से है।

सूचना प्रौद्योगिकी एक सरल तंत्र है जो तकनीकी उपकरणों के सहारे सूचनाओं का संकलन, प्रक्रिया एवं सम्प्रेषण करता है। सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में कंप्यूटर का अत्यंत महत्व है जिससे व्यावसायिक – वाणिज्यिक, जनसंचार, शिक्षा, चिकित्सा आदि कई क्षेत्र लाभान्वित हुए हैं।

आज का युग वैज्ञानिक व तकनीकी क्रान्ति का युग है। सूचना क्रांति ने पूरे भूमंडल को समेट कर छोटा कर दिया है। आज हिंदी राज भाषा और राष्ट्र भाषा के स्तर से आगे बढ़कर एक राष्ट्र और दूसरे राष्ट्रों के साथ विविध मामलों में संपर्क करने वाली भाषा है। उसे सांस्कृतिक, वाणिज्यपरक तथा शैक्षणिक आदान प्रदान करना ही पड़ता है।

कंप्यूटर और सूचना टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में आज जो नया विस्फोट हुआ है वह भाषा में भी एक मौन क्रांति का वाहक बनकर आया है। अभी तक भाषा को मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करना पड़ता था लेकिन आज इसे न केवल मनुष्य की आवश्यकताओं को पूरा करना पड़ रहा है, बल्कि मशीन और कम्प्यूटर की नयी भाषाई माँगों को भी पूरा करना पड़ रहा है।

हिन्दी एक सशक्त भाषा है। सदियों से भारत जैसे बहुभाषी देश की सबसे बड़ी संपर्क भाषा होने के साथ-साथ, आज यह विश्व की तीन सबसे बड़ी भाषाओं में से एक है। लगभग एक करोड़ बीस लाख भारतीय मूल के लोग विश्व के 132 देशों में बिखरे हुए हैं जिसमें आधे से अधिक हिन्दी भाषा को व्यवहार में लातें हैं। गत पचास वर्षों में हिन्दी की शब्द-सम्पदा का जितना विस्तार हुआ है उतना विश्व की शायद ही किसी भाषा में हुआ हो। विदेशों में हिन्दी के पठन–पाठन और प्रचार-प्रसार का कार्य हो रहा है। दूर संचार माध्यमों, फ़िल्मों, गीतों, हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं आदि ने भी प्रचार-प्रसार में अपनी अहम भूमिका अदा की है। तकनीकी एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में भारत का वर्चस्व तेज़ी से बढ़ रहा है।

आज टेक्नॉलॉजी की भाषा को आम आदमी

के नज़दीक पहुँचाने की आवश्यकता बढ़ गयी है। मुक्त बाज़ार और वैश्वीकरण के दबावों ने हिन्दी को ज़रूरत और माँग के अनुकूल ढालने में भूमिका निभाई है। विश्व में अब उसी भाषा को प्रधानता मिलेगी जो व्याकरण संगत होगी, जिसकी लिपि कम्प्यूटर की लिपि होगी। चूँकि हिन्दी भाषा का व्याकरण वैज्ञानिक आधार पर बना है इसलिए देवनागरी लिपि कम्प्यूटर यंत्र की प्रक्रिया के अनुकूल है। इसमें विश्व की किसी भी भाषा एवं ध्वनि का लिप्यंकन किया जा सकता है।

कम्प्यूटर का हिंदीकरण

कम्प्यूटर के हिंदीकरण के लिए लगभग एक दर्जन भारतीय संगणक निर्माता प्रयत्नरत हैं। उनके अथक परिश्रम से आज बाज़ार में हिन्दी में कार्य करने के लिए लगभग डेढ़ दर्जन छोटे-बड़े द्विभाषिक प्रोग्राम सॉफ़्टवेअर, हार्डवेयर के रूप में उपलब्ध हैं। इनका प्रयोग करके हिन्दी भाषा और प्रकाशन उद्योग को विकसित किया गया है। हिन्दी विज्ञान की दृष्टि से आसान और सरल है, उसमें जैसा बोला जाता है वैसा लिखा जाता है।

कम्प्यूटर में हिन्दी की बढ़ती संभावनाओं को ध्यान में रखकर इलेक्ट्रोनिक विभाग ने भारतीय भाषाओं के लिए टेक्नॉलजी विकास नामक परियोजनाओं के अंतर्गत कई प्रोजेक्ट शुरू किए हैं। इस प्रयास में आई॰ आई॰ टी कानपुर और सी – डैक की भूमिका प्रमुख थी। यूनिकोड इस दिशा में एक बड़ी क्रांति है। हिन्दी का यूनिकोड फॉन्ट मंगल एवं अन्य सभी भारतीय भाषाओं के फॉन्ट इनबिल्ट हैं। हमें यूनिकोड समर्थित सुविधा का प्रयोग शुरू कर देना चाहिए ताकि पूरी दुनिया में हिन्दी कामकाज में एकरूपता लाई जा सके और एक कम्प्यूटर से दूसरे कम्प्यूटर में, दुनिया के किसी भी कोने में हमारी हिन्दी की फ़ाइल खुल जाए।

आज विंडोज़ प्लेटफ़ॉर्म में काम करनेवाले अनेक 'हिन्दी सॉफ़्टवेयर' मार्केट में उपलब्ध हैं, जैसे, सी – डैक का ISM आफिस, अक्षर फॉर विंडोज, हिन्दी में स्क्रीन का समस्त परिवेश जैसे संदेश, फ़ाइल नाम आदि भी हिन्दी में उपलब्ध हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी में हिन्दी भाषा का प्रचार

बीसवीं शताब्दी में जैसे-जैसे भारत ने विज्ञान और तकनीकी, अन्तरिक्ष विज्ञान, अणु विज्ञान एवं उद्योग आदि के क्षेत्र में नई मंज़िलें तय कीं, वैसे-वैसे देश में इन विषयों के हिन्दी शब्दावली को विकसित करने की कोशिश की गयी है। सूचना प्रौद्योगिकी के तहत मशीनी अनुवाद एवं लिप्यंतरण सहज एवं सरल हो गये हैं। सी- डैक, पुणे ने सरकारी कार्यालयों के लिए अँग्रेज़ी-हिन्दी में पारस्परिक कार्यालयीन सामग्री का अनुवाद करने हेतु मशीन असिस्टेड ट्रांसलेशन मंत्र पैकेज विकसित किया है। हिन्दी वेबसाईट के माध्यम से हिन्दी एवं देवनागरी लिपि को कंप्यूटर भाषा के रूप में विकसित करने में मदद मिल गयी है। अब वर्तमान स्थिति में वेबसाइट पर हिन्दी में इलेक्ट्रोनिक शब्दकोश उपलब्ध है। इसी तरह अँग्रेज़ी तथा भारतीय- भाषाओं में पारस्परिक अनुवाद प्राप्त करने की सुविधा भी उपलब्ध है। कंप्यूटर एवं इंटरनेट के सहारे शिक्षा का प्रसार तीव्र गति से होने की संभावना बढ़ गयी है। सूचना प्रौद्योगिकी में हिन्दी भाषा का प्रचलन धीरे-धीरे बढ़ रहा है। माइक्रोसॉफ़्ट, याहू, रेडिफ, गूगल आदि विदेशी कंपनियों ने अपनी वेबसाइट पर हिन्दी भाषा को स्थान दिया है। इलेक्ट्रॉनिक क्षेत्र में कंप्यूटर का आगमन एक संक्राति काल रहा। कंप्यूटर की भाषा 0 और 1 है अर्थात् के कंप्यूटर की भाषा की 0 और 1 के माध्यम से किसी भी भाषा में डाला जा सकता है। देवनागरी एक वैज्ञानिक लिपि है और इस लिपि में कंप्यूटर में काम करना कठिन कार्य नहीं है। अमेरिकी वैज्ञानिक नाम्स चाम्सकी ने संस्कृत और नागरी को सबसे अधिक वैज्ञानिक माना है। भाषा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में तकनीकी हिंदी का प्रभाव बढ़ता जा रहा है और इसके लिए कंप्यूटर एक शक्तिशाली तंत्र बन गया है। कंप्यूटर और मोबाइल पर हिंदी को देखना, लिखना और पढ़ना आज भले ही आसान लगता हो लेकिन इसकी शुरूआत ऐसी नहीं थी। पश्चिमी देशों में सूचना प्रौद्योगिकी की शुरूआत होने के कारण इसकी भाषा अंग्रेजी ही रही। इसके समाधान के लिए भारत ने अपनी भाषा और लिपि में सॉफ्टवेयर तेयार करने की दिशा में प्रयोग करने प्रारंभ किए क्योंकि कंप्यूटर का प्रयोग आम लोगों ने तब शुरू किया जब इसमें लिखी जानकारी उनकी अपनी भाषा में हुई।

आज सरकारी या गैर सरकारी कार्यालय, व्यवसाय, शिक्षा, अथवा विज्ञापन, सूचना तंत्र, जनसंचार माध्यम, बैंक, डिजाइनिंग का क्षेत्र, सरकारी उपक्रम, मंत्रालय, निगम, निकाय, स्कूल, विश्वविद्यालय, अस्पताल, रेलवे - एयरपोर्ट सभी क्षेत्रों में कंप्यूटर का प्रयोग निरंतर बढ़ रहा है। हिंदी में कंप्यूटर का स्वतः प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए सी.डी का निर्माण भी भारत सरकार के राजभाषा विभाग ने किया है। इसके द्वारा एमएस वर्ड के साथ साथ हिंदी का प्रयोग, इंटरनेट तथा ई-मेल की विस्तृत एवं सहज जानकारी भी हासिल की जा सकती है। इस दिशा में निशुल्क कंप्यूटर प्रशिक्षण की सरकारी योजना भी अत्यंत कारगर सिद्ध हुई है। राष्ट्रीय सूचना विज्ञान केंद्र तथा ई आर एंड डी सी आई, नोएडा में हिंदी भाषा में कंप्यूटरीकरण की दिशा में बहुत कार्य किए हैंहिंदी के शब्द संसाधन का कार्य करने के लिए आज बाजार में अनेक सॉफ्टवेयर उपलब्ध हैं जैसे: डोस आधारित हिंदी शब्द संसाधन अक्षर, शब्दरत्न का पर्दापण सीडैक द्वारा जिस्ट का विकास, भारतीय लिपियों के लिए इसकी मानक, इनस्क्रिप्ट सॉफ्टवेयर चित्रांकन का विमोचन, श्रीलिपि, अक्षर नीव के यूनिकोड संस्करण, रेड हैट ने पांच भारतीय भाषाओं हेतु मुक्त स्रोत 'लोहित' फोंट जारी किए। माइक्रोसॉफ्ट ऑफिस 2007 का हिंदी संस्करण जारी, हिंदी का श्रुतलेखन सॉफ्टवेयर सीडैक द्वारा विमोचित, प्रोफेसर रघुनाथ कृष्ण जोशी[3] ने विंडोस का डिफॉल्ट हिंदी फोंट मंगल तथा रघु नामक यूनिकोड फोंट बनाएँ। इस प्रकार हिंदी भाषा में कंप्यूटर के कई सॉफ्टवेयर ओर फॉन्ट बने और कंप्यूटर पर हिंदी सरलीकृत रूप के लिए अनेकों प्रयास चल रहे हैं। कंप्यूटर के कारण उत्पादन और वितरण के क्षेत्र का रूप विकसित और विस्तृत हुआ। कंप्यूटर में हिंदी प्रयोग की बढ़ती संभावनाओं को ध्यान में रखकर इलेक्ट्रानिक विभाग ने भारतीय भाषाओं के लिए 'टेक्नोलॉजी विकास' नामक परियोजना के अंतर्गत कई प्रोजेक्ट शुरू किए। किसी भी प्रजातंत्र सरकारी अथवा निजी संगठन में राजभाषा का सम्मान करना होता है। सरकारी कामकाज में पारदर्शिता लाने के लिए सूचनाओं का माध्यम जनभाषा होना जरूरी है। हिंदी भाषा का प्रयोग व्यापक रूप में कंप्यूटर पर हो रहा हैं टंकण, मुद्रण और कंप्यूटर का नियंत्रण हिंदी में सहज संभव हो रहा है। हिंदी में वर्तनी संशोधक विकसित हुआ है और हो रहा है। आज कंप्यूटर पर हिंदी में कार्य करना बहुत आसान हो गया है और भविष्य में इसका रूप और सरल होता जाएगा।

सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में इंटरनेट ने बड़ा धमाका किया है। जिसकी गूंज विश्व के कोने-कोने में पहुंच गई। भारत में 15 अगस्त 1995 में देश में पहली बार इंटरनेट का इस्तेमाल हुआ था। कोलकाता में सबसे पहले इंटरनेट का आम इस्तेमाल किया गया, जब संचार के तीव्रतम साधन तक पहुँच आम लोगों तक सुनिश्चित की गई। इंटरनेट की शुरुआत में लोग पहले सिर्फ कंप्यूटर के ज़रिए इंटरनेट से जुड़ पाते थे लेकिन आज मोबाइल फोन के जरिए इंटरनेट लोगों की पॉकेट में पहुँच गया। यूनिकोड के पर्दापण के बाद हिंदी में इंटरनेट सर्च और ईमेल की सुविधा की शुरुआत हुई। 21वीं सदी के पहले दशक में ही गूगल न्यूज, गूगल ट्रांसलेट तथा ऑनलाइन फोनेटिक टाइपिंग जैसे औजारों ने वेब की दुनिया में हिंदी के विकास में महत्वपूर्ण सहायता की। भारत जैसे देश में महज 10% से भी कम लोग अंग्रेजी का ज्ञान रखते हैं। हिंदी के इस स्वरूप की आवश्यकता बढ़ जाती है। इलेक्ट्रॉनिक संचार माध्यमों और कंप्यूटर आदि के उपयोग में हिंदी ने अपनी जगह बना ली है, इससे हिंदी की अंतरराष्ट्रीय भूमिका मजबूत हो रही है।

आज मोबाइल और इंटरनेट ने विश्व को गांव के रूप में परिवर्तित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मोबाइल क्रांति ने ग्लोबलाइज़ेशन का कार्य किया है। कंप्यूटर से भी यह अत्यधिक सरल माध्यम है। मोबाइल को कंप्यूटर की तरह एक से दूसरी जगह ले जाने में किसी दिक्कत का सामना नहीं करना पड़ता। इंटरनेट पर हिंदी बहुत जोर शोर से साहित्य प्रसार करते हुए अन्य भाषाओं में कदम से कदम मिलाकर चल रही हैं। आज इंटरनेट पर सभी आवश्यक वेबसाइटों के हिंदी संस्करण मौजूद हैं |

विविध बैंकों की वेबसाइट हिंदी में भी उपलब्ध है। हिंदी फिल्मों में भाषा की व्यापक शैलियाँ प्रयुक्त हुई हैं और आज भी हो रही है।

सोशल मीडिया और हिंदी

हमारे जीवन के दिन प्रतिदिन के कामों में इंटरनेट की उपयोगिता निरंतर बढ़ती जा रही है। ट्विटर, फेसबुक,व्हाट्सएप, यूट्यूब, इंस्टाग्राम जैसे सोशल मीडिया ने आज तो सूचना क्षेत्र का रूप पूरी तरह ही बदल दिया है। सोशल मीडिया के जरिए देश विदेश की जानकारी, खेल, संगीत, शिक्षा, फिल्म, मौसम, नौकरी, टिकट बुकिंग, खरीदारी सब कुछ बड़ी ही सहजता से संभव हो जाता है। सोशल मीडिया पर हिंदी सरलीकरण के लिए और भी बहुत से काम हुए उनमें गूगल मानचित्र, हिंदी में देखने, बोलकर हिंदी टाइप करने, हिंदी वॉयस सर्च आदि की सुविधाएँ मिलना प्रमुख हैं।

सूचनाओं की तकनीकों से हिंदी भाषा का गर्व बड़ा है। वर्तमान काल में इंटरनेट की सकारात्मक भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। लॉकडाउन के समय में भी सूचनाओं में कहीं और भी अवरुद्धता नहीं आई इसका कारण इंटरनेट भी था। उस समय इंटरनेट न होता तो आज जो ऑनलाइन पढ़ाई का प्रचलन, वेबीनारों, ऑनलाइन संगोष्ठी, वर्कशॉप का कार्य पूरी तरह बंद हो जाना था। डाक भेजना, ई-प्रशासन, ई-बैंकिंग, ई-एजुकेशन, खेल-जगत, शेयर मार्केट, ईमेल, ई-कॉमर्स, ई-गवर्नेंस, ई-विजिलेंस, ई-कटेंट, साइबर कैफे, टेलीमेडिसिन, प्रेस सुचना कार्यालय, फिल्म डिवीजन, अनुसंधान निदेशालय, राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय संग्रहालय, रजिस्ट्रार, न्यू पेपर्स ऑफ इंडिया, फिल्म संबंधी केंद्रीय बोर्ड तथा फिल्म उत्पादों के निदेशालय आदि अनेक संस्थान सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से हिंदी भाषा का प्रयोग कर रहे हैं। अनेक हिंदी पत्र-पत्रिकाओं ने इंटरनेट के द्वारा ही अपनी अनेक पोर्टल स्थापित किए हैं। आज सोशल मीडिया के द्वारा अपनी रचनाओं को प्रसारित कर बहुत से लोग लेखक बने हैं। हिंदी इंटरनेट जगत में 23 सितम्बर 1999 एक क्रांति दिवस के रूप में आया जब विश्व के पहले हिंदी पोर्टल वेबदुनिया डॉट कॉम की शुरुआत हुई । बहुत ख़ुशी की बात यह है कि शिरीष कुमार मौर्य , पंखुरी सिन्हा ,महेश पुनेठा ,आर. पी. तोमर आदि की कविताएँ समकालीन हिंदी कविता ब्लॉग 'अनुनाद' के माध्यम से संपन्न हो रही हैं । हिंदी में दो ऐसे ब्लॉग हैं ऑनलाइन वेब पत्रिका की तरह ही हैं । बालेंदु शर्मा दाधीच का 'वाह मीडिया' और रवि रतलामी का 'हिंदी ब्लॉग' जो तकनीकी क्षेत्र के नए घटनाक्रम सम्बन्धी सूचनाओं और व्यंग्यात्मक टिप्पणियों के लिए चर्चित हैं ।

ऑनलाइन हिंदी साहित्य के लिए महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय की वेबसाइट 'हिंदी समय' का योगदान भी यहाँ स्मरणीय है । आज हिंदी कविता की सबसे बड़ी वेबसाइट के रूप में 'कविता कोश' का नाम भी उल्लेखनीय है । हिंदी में इंटरनेट पर आसानी से वेब पेज बनाने के लिए आजकल कई मुफ़्त टूल उपलब्ध हैं।

इंटरनेट पर हिंदी के अनेक साधन है जैसे भारतवाणी [4] , शब्दनगरी [5] , हिंदी विकिपीडिया [6], गूगल ट्रांसलेट [7] , हिंदी शब्दतंत्र [8], आदि। कुछ विद्वान कहते हैं कि इंटरनेट के कारण हिंदी का रूप विकृत हो रहा है लेकिन ऐसा नहीं है। नई तकनीक के साथ हिंदी भाषा को जोड़ने के लिए कुछ परिवर्तन जरूरी भी थे। कुछ अन्य भाषाओं के शब्दों को हिंदी में समाहित किया है। नई प्रौद्योगिकी को ग्रहण करने के लिए तकनीकी शब्दों को बनाया रहा है। समय के अनुसार में परिवर्तन आ जाएँ तो उसकी सार्थकता को समझ कर उसे ग्रहण करना चाहिए। इस प्रकार सूचना के प्रकार टेलीविजन, कंप्यूटर, मोबाइल, इंटरनेट, सोशल मीडिया अपनी महती भूमिका निभा रहे हैं। इस कारण हिंदी के विकास में पहले की तुलना में बहुत वृद्धि हो गई है।

संचार माध्यमों में हिंदी

जनसंचार, साधारण जनता के लिए होता है। इससे संदेश तीव्रतम गति से गंतव्य तक पहुंचता है। इसका रूप लिखित या मौखिक हो सकता है। इसके द्वारा जन सामान्य की प्रतिक्रिया का पता चल जाता है एवं इसका प्रभाव बहुत गहरा होता है। आजकल हिन्दी का प्रसार वैश्विक व्यवसायीकरण के कारण निरंतर हर तरफ हो रहा है हिन्दी आर्थिक एवं वाणिज्यिक कार्यों की भाषा बनती जा रही है, विश्व-भाषा बन गयी है।

प्रिंट मीडिया में समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ आती हैं। स्वतंत्रता के बाद समाज में राजनीतिक जागृति, सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक गतिविधियों एवं घटनाओं के प्रति जन सामान्य की जिज्ञासा में

वृद्धि हो रही है। प्रिंट मीडिया ने भारत के स्वतंत्रता आंदोलन को हिन्दी के माध्यम से बहुत गति प्रदान की थी। स्वतंत्रता के बाद हिन्दी को राजभाषा घोषित करने के कारण हिन्दी समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं का निरंतर प्रसार बढ़ता जा रहा है । पत्रिकाओं ने समाज में साहित्यिक चेतना संप्रेषित की है। विदेशों में सभी प्रमुख शहरों से हिन्दी पत्रिकाएँ निरंतर छपती रहती हैं।

इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में आकाशवाणी, दूरदर्शन एवं इन्टरनेट पर भी हिन्दी का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है। हिन्दी के प्रयोजनमूलक रूप का निरंतर विकास हो रहा है। 1927 से रेडियो का भारत से प्रसारण शुरू किया गया, यह पहले गैर- सरकारी संस्था के पास था, बाद में 1930 से इसे भारत सरकार ने अपने अधीन कर लिया। हिन्दी प्रसार के लिए अहिन्दी भाषा केन्द्रों से हिन्दी के व्यावहारिक प्रयोग का ज्ञान बढ़ाने के लिए हिन्दी के पाठ निरंतर प्रसारित किये जाने लगे। रेडियो नाटक लेखन बीसवीं सदी में एक सशक्त साहित्य विधा के रूप में उभरा है। आकाशवाणी केन्द्रों में हिन्दी में वार्ताएँ प्रसारित की जाती हैं। कवि सम्मेलनों का भी आयोजन किया जाता है। आकाशवाणी को देश की 95 प्रतिशत जनसंख्या तक पहुँच है। इसके विविध भारती एवं एफएम चैनल, चित्रपट संगीत द्वारा हिन्दी के प्रसार में अपूर्व योगदान कर रहे हैं।

विश्व के कई प्रमुख देशों के आकाशवाणी कंपनियाँ जैसे बीबीसी लंदन, वायस ऑफ अमेरिका, रेडियो सिलोन, जर्मन रेडियो व अन्य केन्द्रों से हिन्दी में समाचार व हिन्दी फिल्मों के गाने वार्ताएँ प्रसारित होती रहती हैं।

हिन्दुस्तान में दूरदर्शन का प्रादुर्भाव 70 के दशक से हुआ। इसे सूचना देने, ज्ञान का प्रसार करने एवं मनोरंजन का साधन मानकर बढ़ावा दिया गया। हिन्दी की साहित्यिक कृतियों में उपन्यास, नाटक, कविता, कहानी, कवि सम्मेलन आदि के माध्यम से दूरदर्शन ने हिन्दी के प्रचार-प्रसार में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। रामायण, महाभारत, कौन बनेगा करोड़पति आदि धारावाहिकों द्वारा हिन्दी घर-घर पहुँच गई है। अंग्रेजी चैनल विज्ञापन के लिए हिन्दी को अपना रहे हैं। विज्ञान पर आधारित कार्यक्रम, नेशनल जोग्राफिक एवं डिस्कवरी भी हिन्दी में प्रसारित की जा रही है। फिल्मों के द्वारा हिन्दी की लोकप्रियताबढ़ी है। देश कम्प्यूटर एवं इन्टरनेट पर हिन्दी के ब्लाग बनाये जा रहे हैं, और इनकी संख्या तेज़ी से बढ़ रही है। इस तरह, हिन्दी जनचेतना को स्वर देने में सर्वाधिक समर्थ होकर धीरे-धीरे विश्व में अपना सम्मानजनक स्थान बनाने की ओर अग्रसर हो रही है।

आज हिंदी भाषा सूचना प्रौद्योगिकी को ग्रहण कर आयामों पर डल कर भारत के विभिन्न राज्यों को ही नहीं अपितु पूरे विश्व को अपनी विशेषता से प्रभावित कर रही है। विभिन्न संस्कृतियों, विभिन्न भाषाओं के गुम्फन में गुंथी हुई हिंदी वर्तमान में सूचना प्रौद्योगिकी की सभी तकनीकों को अपने में समाहित कर विश्व भाषाओं में अपना प्रथम स्थान बनाने के लिए निरंतर प्रयास कर रही हैं। प्रिंट मीडिया से लेकर डिजिटल युग तक हिंदी ने सफलता की मंजिल को प्राप्त किया है।

सूचना को सर्वग्राही बनाने के लिए विभाषाएँ एवं जनभाषाएं हिंदी जैसी भाषा को प्रभावित करने लगीं। भारतीय टेलीविजन का बहुजन हिंदी भाषा को समझता है। इस कारण आज सैंकड़ों देशी-विदेशी चैनल हिंदी भाषा को अपने प्रसारण का माध्यम बना रहे हैं। सचमुच समूचे देश में टेलीविजन कार्यक्रमों की लोकप्रियता की बदौलत देश के अहिंदी भाषी लोग हिंदी समझने और बोलने लगे हैं। अत: कहा जा सकता है कि टेलीविजन के प्रसारण ने हिंदी भाषा के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है और सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में हिंदी भाषा और भी आगे बढ़ेगी।

संदर्भ सूची

1. कनाडा का प्रमुख दार्शनिक
2. डॉ सुं नागलक्ष्मी , संचार, सूचना, कंप्यूटर और प्रयोजनमूलक हिंदी जगत ,पृ 42
3. देवनागरी के मंगल फॉण्ट के जनक थे।
4. भारतवाणी एक परियोजना है, जिसका उद्देश्य मल्टीमीडिया का उपयोग करते हुए भारत की समस्त भाषाओं के बारे में एवं भारतीय भाषाओं में

उपलब्ध ज्ञान को एक पोर्टल पर उपलब्ध कराना है।

5. ब्लॉगिंग एवं सोशल मीडिया नेटवर्किंग वेबसाइट

6. विकिपीडिया का हिंदी भाषा का संस्करण ,जिसका स्वामित्व विकिपीडिया संस्थापन के पास है।

7. इस एप्लीकेशन से टाइप की गयी या हाथ से लिखी गयी या फोटो में मौजूद या और बोली गयी जानकारी का 100 से ज़्यादा भाषाओं में अनुवाद कर सकते हैं ।

8. अर्थों के माध्यम से सुव्यवस्थित किया गया मशीन के पड़ने योग्य एक शाब्दिक संचय है।

सहायक ग्रन्थ सूची

1. डॉ.हरिमोहन ,कंप्यूटर और हिंदी, तक्षशिला प्रकाशन नयी दिल्ली।

2. डॉ. सुं.नागलक्ष्मी, संचार, सूचना, कंप्यूटर और प्रयोजनमूलक हिंदी जगत ,जवाहर पुस्तकालय, मथुरा।

3. प्रो.एच. पद्मनाभन,प्रो. जी.सीतालक्ष्मी, हिंदी भाषा और लिपि ,वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली।

4. डॉ .एम.एस.विनयचंद्रन ,डॉ. कृष्णकुमार पिल्लै ,सूचना एवं संगणक,प्रकाशन विभाग, केरल विश्वविद्यालय ,तिरुवनंतपुरम।

5. हिंदी अध्ययन मंडल ,पत्रकारिता की बदलती दुनिया, केरल विश्वविद्यालय,तिरुवनंतपुरम।

6. डॉ. मलिक मोहम्मद,राजभाषा विकास के विविध आयाम ,प्रवीण प्रकाशन , नयी दिल्ली।

7. रजिंदर कौर, सूचना प्रौद्योगिकी के विभिन्न स्तर एवं हिंदी भाषा(ऑनलाइन लेख)हिंदी विभाग , जी जी सी डी एस डी कॉलेज ,हरियाणा , होशियारपुर।

◆ असिस्टेंट प्रोफसर

हिन्दी विभाग,

महात्मा गांधी कॉलेज,

तिरुवनंतपुरम, केरल राज्य।

व्यक्ति के आर्थिक और सामाजिक विकास में प्रत्याहार की भूमिका: एक अध्ययन

◆दीपा आर्या

शोध सार

व्यक्ति सामाजिक प्राणी है। व्यक्ति का कर्तव्य है, समाज में कुशल व्यवस्था बनाए रखना। अपने हित के साथ समाज के हित की भी सोच रखनी है। लेकिन व्यक्ति नाम और पैसे कमाने के पीछे भाग रहा है। उसका अपनी इन्द्रियों पर कोई नियंत्रण नहीं है। उसकी इन्द्रियाँ बाहर की दुनिया की चमक चांदनी में लगी हैं। वह भी चमक चांदनी जैसी ज़िदगी जीना चाहता है। वह भूल जाता है कि यह जीवन का सत्य नहीं है, जिस सुख की ओर जा रहा है, वह थोड़े समय के लिए है। वह जानता नहीं है कि बिना आवश्यकता के संसाधनों को एकत्रित करना बाद में उसको दुःख ही प्रदान करेगा। परिणामस्वरूप वह शारीरिक- मानसिक रोगों, जैसे तनाव क्रोध जैसी व्याधियों से ग्रसित होता जा रहा है। वर्तमान समय में अधिकाधिक व्यक्ति तनिक सी बातों पर तुरंत क्रोधित हो जाते हैं और अपनी मानसिक स्थिरता, धैर्य, व्यवहार खोते जा रहे हैं। यह समाज के लिए अहितकर है, प्रतिदिन अपराध उत्तरोत्तर बढ़ रहे हैं। इन सबका कारण यह है कि व्यक्ति का अपनी इन्द्रियों पर कोई नियंत्रण नहीं है। अपने क्रोधित चिड़चिड़े व्यवहार के कारण अपने परिवार और आस-पड़ोस के साथ अच्छा संबंध नहीं रख पाता है। इन सभी परेशानियों को रोकने के लिए आज के समय में प्रत्याहार का अभ्यास आवश्यक है, जिससे धैर्य, स्थिरता, समझ, इन्द्रियों पर नियंत्रण आदि प्राप्त होंगे।

मेरे लिए क्या सही है, क्या गलत है. मुझे किस चीज की ज़रूरत है ओर कितनी मात्रा में आवश्यकता है आदि का ज्ञान होगा। फिर वह सोच-विचार करके तकनीकी साधनों का आवश्यकतानुसार इस्तेमाल करे। तकनीक के मायाजाल से उत्पन्न दुर्भावों से बचे रहना है। प्रत्याहार इन्द्रियों को अंर्तमुखी बनाता है। प्रत्याहार का अभ्यास हमारे आध्यात्मिक स्तर को बढ़ाता है।

बीज शब्दः इन्द्रियाँ, प्रत्याहार, व्यक्ति, योग, स्वास्थ्य, तकनीक, प्राण, कर्म, प्रत्याहार।

प्रस्तावना

'प्रति' व 'आहार' दो पदों से मिलकर बने 'प्रत्याहार' शब्द में 'प्रति' का अर्थ है- 'विपरीत' तथा 'आहार' के दो अर्थ हैं- पहला 'संज्ञात्मक' है व दूसरा क्रियात्मक।

संज्ञात्मक रूप से इसका तात्पर्य उन विषयों से है जिनमें पांचों ज्ञानेन्द्रियाँ (कर्मेन्द्रियाँ) स्वाभाविक रूप से संलग्न रहती हैं - आँख, जिह्वा, नाक, कान व त्वचा। ये इन्द्रियाँ क्रमशःरूप, रस, गन्ध, शब्द एवं स्पर्श जैसे पाँच विषयों से निरन्तर संलग्न रहती हैं। क्रियात्मक रूप से 'आहार' का तात्पर्य है- आहरण, पीछे मुड़ना, खींचना, वापस लाना आदि। उल्लेखनीय है कि इन्द्रियों का स्वभाव ही बहिर्मुखी है, जो योगमार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। इन इन्द्रियों को इनके विषयों से आहरित करके अंतर्मुखी करने का अभ्यास 'प्रत्याहार' कहलाता है। प्रत्याहार का अर्थ उदाहरण के द्वारा समझ सकते हैं - जिस प्रकार कछुवा अपने अंगों को समेट लेता है या निर्धन व्यक्ति जाड़े के मौसम में अपने अंगो को सिकोड़कर सोता है या छोटा बच्चा सर्प, आग या अस्त्र को छूने दौड़ता है और उसकी माँ उसे उधर न जाने देकर लौटाकर अपनी गोद में ले लेती है उसी प्रकार इन्द्रियों को इन घातक विषय स्वादों से विमुख कर अपने अंदर की ओर लौटाने का प्रयत्न करना चाहिए। प्रत्याहार हमें दूर करता है गलत आदतों, गलत आहार और कुसंगति से। प्रत्याहार का अभ्यास दृढ़ होने पर हमारा सात्विक विचार रहना है और हमारी इन्द्रियाँ बाहरी विषयों की तरफ नहीं जातीं अर्तमुखी हो जाती हैं जिससे हमारा व्यक्तित्व विकसित होता है। हम तनाव, अवसाद आदि रोगों से बचे रहते हैं। हमारे अन्दर अच्छी आदतें विकसित होती हैं। आलस्य दूर हो जाता है, धीरे-धीरे हमारे चिडचिड़ापन और क्रोध रूपी स्वाभाव हटने लगते हैं।

महर्षि पतंजलि कृत 'योगदर्शन' में प्रत्याहार का वर्णन किया गया है, परन्तु प्रत्याहार के प्रकार नहीं बताये गये हैं-

जबालदर्शनोपनिषद में प्रत्याहार के तीन प्रकारों का वर्णन किया गया है।

1. इन्द्रिय प्रत्याहार - इन्द्रियों पर नियंत्रण
2. मन प्रत्याहार- प्राण पर नियंत्रण
3. कर्म प्रत्याहार -कार्य पर नियंत्रण ।

विभिन्न पौराणिक ग्रन्थो के अनुरूप प्रत्याहार का उल्लेख इस प्रकार है -

गोरक्षनाथ 'सिद्धसिद्धान्त पद्धति' में लिखते हैं –

"प्रत्याहार इति चैतन्यतुरंगाणां प्रत्याहरणम्।

विकारग्रसने उत्पन्नविकारस्यापि निवृत्तिर्भवतीति प्रत्याहारलक्षणम्"[1]

आत्मा के घोड़े इन्द्रियों को पंच ज्ञानेद्रियों (रुप, रस, शब्द, गंध, स्पर्श आदि विषयों) से लौटा लेना,विकारों को दूर करना आदि से विकारों की भी निवृत्ति होती है।

महर्षि पतंजलि कृत 'पतंजली योग सूत्र' में लिखते हैं–

"स्वविषयासंप्रयोगे चित्तस्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः"[2]

"ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम"[3]

इन्द्रियों को वश में करना।

महर्षि घेरण्ड जी 'घेरण्ड संहिता' में लिखते हैं –

"अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रत्याहारकमुत्तमम् ।

यस्य विज्ञानमात्रेण कामादिरिपुनाशनम् "[4]

प्रत्याहार कामादि शत्रुओं का नाश करता है।

"यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।

ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत्"[5]

जहाँ-जहाँ यह चंचल मन विचरण करे, इसे वहीं-वहीं से लौटाने का प्रयत्न करते हुए आत्मा के वश में करे।

"पुरस्कारं तिरस्कारं सुश्राव्यं वा भयानकम् ।

मनस्तमान्नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् "[6]

पुरस्कार तिरस्कार सुनने में, सुखद सुनने में अरुचिकर वचनों से मन को हटाकर आत्मा के वश मे करे।

"सुगन्धे वाऽपि दुर्गन्धे मनो घ्राणेषु जायते ।

तस्मात्प्रत्याहरेदेतदात्मन्येव वशं नयेत्"[7]

सुगन्ध और दुर्गन्ध से मन को हटा ले।

"मधुराम्लकतिक्तादिरसं गतं यदा मनः।

तस्मात्प्रत्याहरेदेतदात्मन्येव वशं नयेत्"[8]

मधुर, अम्ल, तिक्त आदि रसों की ओर मन आकृष्ट हो तो उसे वहाँ से हटाकर आत्मा के वशीभूत करे।

महर्षि वसिष्ठ जी 'वसिष्ठ संहिता' में लिखते हैं –

विषयों में स्वाभाविक रूप से विचरनेवाली इन्द्रियों को उनसे बलपूर्वक पीछे लौटाना ही प्रत्याहार कहा गया है।[9]

जो कुछ भी दिखाई देता है, उन सभी को आत्मा के समान आत्मा में ही देखें इसे महात्मा योगियों ने प्रत्याहार कहा है।[10]

शरीरधारियों के लिए जो नित्य कर्म हैं उनका बाहरी साधनों के बिना मन से ही आत्मा में अनुष्ठान करना।[11]

अठारह मर्मस्थानों में वायु को स्थिर करना,फिर एक-एक स्थान से उचित रीति से वायु को खींचना।[12]

महर्षि वेदव्यास जी कहते हैं – आँख आदि इन्द्रियाँ अपने-अपने विषयों की ओर भागती हैं,उनको वहाँ से रोकना प्रत्याहार कहा जाता है।[13]

जैसे-जैसे तृतीय (सायंकल) होता जाता है वैसे ही सूर्य अपने प्रकाश को समेटता जाता है। उसी प्रकार योगी अपनी साधना का स्तर बढ़ाते हुए जब अपने तृतीयांग (उच्च योग तृतीयांग-समाधि) में स्थित हो जाता है तो वह मन के समस्त विकारों का शमन कर लेता है ।[14]

प्रत्याहार पुनरावृत्ति प्रविधियाँ-

इन्द्रिय प्रत्याहार - आज के समय में इन्द्रियों पर नियंत्रण करना बहुत आवश्यक है। आधुनिक जीवनशैली की चकाचौंध में घिरा हुआ व्यक्ति अपना ज़्यादा से ज़्यादा समय टेलिविज़न, मोबाईल, इंटरनेट में व्यर्थ करता है; इन्द्रियों और उससे जुड़े विषयों का गुलाम बनता जा रहा हैं। प्रतिदिन हम अपने जीवन के लक्ष्य से भटकते जा रहे हैं। इसलिए आधुनिक समय में प्रत्याहार आवश्यक है। आँख रूप को, नाक गन्ध को, जीभ स्वाद को, कान शब्द को और त्वचा स्पर्श को ग्रहण करता है। इन सब से मन में विकार उत्पन्न होते हैं। भोग विषय ज्यों-ज्यों बढ़ते हैं त्यों त्यों ये इन्द्रियाँ और बलवान होकर मन को विक्षिप्त करती रहती हैं। अतः इनको विषयों से सर्वथा विरत करने का प्रर्याप्त अभ्यास करना चाहिए। इसकी योनि मुद्रा अतिरिक्त इन्द्रियों को नियंत्रित करने के लिए ध्यानयोनि, शंखमुखी मुद्रा, शाम्भवी मुद्रा, त्राटक, कपालभाति आदि के अभ्यास करती है।

प्राण प्रत्याहार :- प्राण 'हमारी जीवन शक्ति है जिससे यह जीवन चलता है। जब तक इस शरीर में प्राण है तब तक जीवन है। जैसे ही यह शरीर से निकलता है तब शरीर की मृत्यु हो जाती है । हमारे शरीर में 10 प्राण हैं - प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल ,देवदत, धनंजय। इनमें से प्राण और अपान का ज़्यादा महत्व माना जाता है। प्राण पर ध्यान करने से इन्द्रियाँ नियंत्रित हो जाती हैं। स्वामी जी भी कहते हैं -"चले वाते चलं चित्तं"[15]जैसे -जैसे प्राण वायु चलती है वैसे मन भी चंचल होता है, जैसे ही प्राण वायु स्थिर हो जाती है वैसे ही हमारा मन भी स्थिर हो जाता हैं । यौगिक ग्रंथ वर्णन करते हैं -प्राणों को शरीर के अलग-अलग भागों पर ले जाना, यह विधि पैर के अंगूठे से शुरू होकर सिर तक ले जाया करती है। सूर्यभेदन, भस्त्रिका, शीतली, उज्जायी, सीत्कारी, शीतली कुम्भक आदि से प्राण-नियंत्रण होता है।

कर्म प्रत्याहार: - जब तक हम अपनी कर्मेन्द्रियों को

नियंत्रित नही करते तब तक संवेदी इन्द्रियों को नियंत्रित नहीं किया जा सकता हैं। कर्मेन्द्रियों का सीधा संबंध हमारे आसपास की बाहरी दुनिया के साथ है। जिन आवेगों को हम प्राप्त करते है वे हमारी संवेदनाओ को व्यक्त करते हैं। कर्मेन्द्रियाँ संवेदी अंगो की अधिक भागीदारी का कारण बनती है। इसमें कर्म इन्द्रियों को नियंत्रित करना। इसमें कर्म योग शामिल हैं'- निःस्वार्थ सेवा करना और हमारे जीवन को पवित्र बनाना आदि। 'भगवद्गीता' कहती है आपको अपना कर्तव्य करना है, न कि आप जो करते हैं उसके फल की इच्छा। यह एक प्रकार का प्रत्याहार है। तप से भी प्रत्याहार का अभ्यास किया जाता है जिससे कर्मेन्द्रियाँ नियंत्रण में होती है। उदाहरण -आसन का उपयोग हाथ- पैरों को नियंत्रित करने के लिए किया जा सकता है। इससे हम एक समय तक स्थिर बैठ सकते हैं।

मन प्रत्याहार :- मन छठा इन्द्रिय अंग है और अन्य सभी इन्द्रियाँ अंगों के समन्वय के लिए ज़िम्मेदार हैं। एक तरीके से जब हम किसी चीज़ पर ध्यान दे देते हैं तब भी हम हमेशा प्रत्याहार का अभ्यास करते हैं । मन का ध्यान है जहाँ भी, हम अपना ध्यान केंद्रित करते हैं। हम स्वाभाविक रूप से अन्य चीज़ो को नज़र अंदाज़ करते हैं। हम अपनी इंद्रियों को प्रत्याहार द्वारा नियंत्रित करते हैं। 'योग सूत्र' पर व्यास भाष्य में बाताया गया है - जहाँ भी रानी मधुमक्खी जाती हैं, अन्य सभी मधुमक्खियाँ भी उसी ओर अग्रसर हो जाती हैं। इसी प्रकार मन को नियंत्रित करना चाहिए, इन्द्रियाँ अपने आप नियंत्रण में हो जाती हैं ।

व्यक्तिगत अनुभव: - व्रत या तप यह स्वाद पर नियंत्रण प्रदान करता है और आपकी भूख पर भी यह आंनद देता है। जहाँ हम हैं यह हमारी अधिक बात करने की आदत को भी रोकता है । व्रत रखने से हमारी कर्मेन्द्रियाँ स्वस्थ रहती हैं जिससे मन स्वस्थ रहता है । मन के स्वस्थ होने से ज्ञानेन्द्रियाँ अन्तमुर्खी हो जाती है; अध्यात्म प्रसाद की प्राप्ति होती है।

कपालभाति किया :- कपालभाति को लगभग 5 से 10 मिनट तक अधिक करने से पूरे शरीर में बहुत ही शांति और सुखदायक सनसनी महसूस होती हैं, विचार शून्य हो जाते हैं, मन स्थिर हो जाता है। एक विशेष प्रकार के आनंद अनुभव होता है।

षण्मुखी मुद्रा :- थोड़ी देर के लिए बाहरी वातावरण के साथ सभी संपर्क समाप्त हो जाते हैं। आँख, कान, नाक, त्वचा और जिह्वा सब के द्वारा होनेवाली क्रियाएँ रुक जाती हैं। एक अजीब सी सुखदायक सनसनी सी पूरे शरीर में अनूभव होती है। सिर्फ अपनी ही आवाज़ सुनाई देती है। मन एकदम स्थिर, सुख और आनंद से भर जाता है।

त्राटक :- एक मोमबत्ती की लौ या कोई भी बाहरी वस्तु हमें अंदर की ओर ध्यान केंद्रित करने में मदद करती है। खुली आँखों से उस लौ पर ध्यान केंद्रित करें और फिर बंद आँखों से हम उस लौ को अपनी भौ के अंदर देखने की कोशिश करें। फिर भृकुटी रूपी स्थान में अंदर की ओर अनुभव करें।

स्वाध्याय :- यह सकारात्मक सोच की ओर ले जाता है और ध्यान की ओर वास्तविक यात्रा को प्रोत्साहित करता है। हमें वास्तविक लक्ष्य का ज्ञान कराता है, सत्व गुण बढ़ाता है, गलत रास्ते से दूर ले जाता है।

सत्संग - सोच को विकसित करता है। सत्संग के माध्यम से हम दूसरों के अनुभव के बारे मे जानते हैं और जीवन के बारे मे वास्तविक विचार प्राप्त करते हैं । अपने बारे में जानते हैं कि हम सही रास्ते पर हैं या नहीं।

निष्कर्ष

'प्रत्याहार' योग के सभी अंगों से संबधित हैं । अन्य सभी अंग यम से समाधि तक हैं, परन्तु कई हठयौग ग्रंथों में आसन से समाधि तक माना है। उदाहरण के लिए आसन ज्ञानेन्द्रियों कर्मेन्द्रियों दोनों को नियंत्रित करता है। प्राणायाम में साँस के माध्यम से हम ध्यान अंदर की ओर ले जाते हैं। दूसरे शब्दों मे प्रत्याहार इन्द्रियों को वश में करके विषयों से हटाकर परमात्मा की ओर अग्रसर कराता है। प्रत्याहार एक टूटी हुई बाल्टी से टपक रहे पानी को बर्तन में इकट्ठा करने की कोशिश जैसा है, इन्द्रियाँ मन के बर्तन में छेद की तरह हैं, जब तक उसे सिला नहीं जाए मन सत्य का अमृत

धारण नहीं कर सकता। प्रत्याहार ध्यान के लिए मन को तैयार करने के कई तरीके प्रदान करता है। यह हमें पर्यावरण में हो रही गड़बड़ी से बचाने में भी मदद करता है। हम में सकारात्मक विचार उत्पन्न करके हमें सत्य से जोड़ता है। जैसे घर की नींव ईंट होती है वैसे परम आनंद को प्रत्याहार के द्वारा ही प्राप्त कर सकते हैं।

सन्दर्भ

सिद्धसिद्धान्तपद्धति (2 /32) [1]
'योग सूत्र' (2 /55) [2]
'योग सूत्र' (2 /55) [3]
'घेरण्ड संहिता'(4 /1)[4]
'घेरण्ड संहिता'(4 /2)[5]
' घेरण्ड संहिता'(4 /3)[6]
'घेरण्ड संहिता'(4 /4)[7]
'घेरण्ड संहिता'(4 /5) [8]
'वसिष्ठ संहिता' (3 /58)[9]
'वसिष्ठ संहिता' (3/60)[11]
'वसिष्ठ संहिता'(3 /61) [12]
'योगचूड़ामण्योपनिषद' (120)[13]
'योगचूड़ामण्योपनिषद' (121)[14]
'हठयोगप्रदीपिक'(2 /2) [15]

सन्दर्भ ग्रंथ

1-डॉ.पु.वि.करंबेलकर (2017), पतंजलि, योग सूत्र (तीसरा संस्करण), स्वामी कुवलयानन्द, मार्ग लोणावला, कैवल्यधाम, महाराष्ट्र ।

2-स्वामी सत्यानन्द सरस्वती (2012), मुक्ति के चार सौपान (दूसरी संस्करण);योग पब्लिकेशनस ट्रस्ट, मुंगेर, बिहार।

3-स्वामी मुक्तिबोधन (2012), हठ योग प्रदीपिका (चैथासंस्करण);योग पब्लिकेशनस टस्ट, मुंगेर बिहार।

4-स्वामी दिगंबरजी, डॉ.पीताम्बर झा एवं श्री शंकर सहाय (1984), वसिष्ठसंहिता (दूसरा संस्करण), कैवल्यधाम, लोनावला, महारष्ट्र, भारत।

5-स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती (2011), घेरण्ड संहिता (पहला संस्करण); योग पब्लिकेशनस टस्ट, मुंगेर बिहार।

6-डॉ चमनलाल गौतम (2015), घेरण्ड संहिता, ख्वाजा, कुतुब वेदनगर, बरेली । 2015

7-पं० श्रीराम शर्मा आचार्य, योगचूडामण्युपनिषद, युग निमार्ण योजना विस्तार ट्रस्ट गायत्री तपोभूमि, मथुरा ।

8-परमहंसस्वामी अनन्त भारती, सिद्धसिद्धान्तपद्धति, चैखम्भा ओरियन्टालिया दिल्ली।

9-डॉ.चमनलाल गौतम, गोरक्ष संहिता, ख्वाजा कुतुब, वेदनगर, बरेली ।

10-स्वामी रामदेव, 2015, योग दर्शन, पतंजलि योगपीठ, हरिद्वार

11- स्वामी श्री.द्वारिकादासशास्त्री, 2009, हठयोगप्रदीपिका चैखम्भा; विद्याभवन , वाराणसी।

12-परमहंसस्वामी अनन्त भारती, सिद्धसिद्धान्त पद्धति; चैखम्भा, ओरियन्टालिया, दिल्ली ।

◆ शोधार्थी
योग विंज्ञान विभाग
निर्वाण विश्वविद्यालय, जयपुर
मो.न.- 9557284193
ई-मेल –deepaaaa87@gmail.com

मुद्रक तथा प्रकाशक डॉ.पी.लता, आरती, टी.सी. 14/1592, फोरस्ट ऑफिस लेन, वषुतक्काटु, तिरुवनन्तपुरम -14 द्वारा अबी प्रकाशन एन्ड प्री-प्रेस, करुमम्, तिरुवनन्तपुरम -2 में मुद्रित तथा डॉ.पी.लता द्वारा संपादित
Printed & Published by Dr.P.Letha, Arathi, T.C. 14/1592, Forest Office Lane, Vazhuthacaud, Thiruvananthapuram -14, Printed at Abi Design & Pre-Press, Karumom, Thiruvananthapuram -2 & Edited by Dr. P. Letha